पहला और दूसरा
पतरस

मसीही विश्वासियों के लिए **"पहला पतरस और दूसरा पतरस"** नामक बाइबॅल-पुस्तकों का एक संक्षिप्त अध्ययन

PAHLA AUR DOOSARA PATRAS

First Hindi Edition **: July-2009**

Translated into Hindi by : **J.P. Pandey**
Assisted by : **R.K. Khullar**

Originally published in English by the Fellowship Bible Church, 3217, Middle Road, Winchester, VA. 22602 (U.S.A.), with the title "Lessons in First and Second PETER *for Growing Believers", edited by Scott and Tim Mcmanigle, and the same is based on the New Tribes Mission's method of chronologically teaching the scripture.*

Copyright © The Fellowship Bible Church,
Winchester, VA. (U.S.A.). All rights reserved.

विषय सूची

अध्याय	पृष्ठ संख्या
एक	5–8
दो	9–17
तीन	18–23
चार	24–29
पांच	30–34
छः	35–39
सात	40–50
आठ	51–59
नौ	60–66

पहला और दूसरा
पतरस

नामक

बाइबॅल–पुस्तकों का एक संक्षिप्त अध्ययन

1

पतरस ने यह पत्री विशेषकर उन मसीही यहूदियों के लिए लिखी थी जो घोर सतावट के कारण तितर–बितर होकर विभिन्न स्थानों में रह रहे थे (प्रेरि0 8:1)। प्रभु परमेश्वर ने पतरस को यहूदियों के मध्य सुसमाचार–सेवा के लिए खास तौर पर इस्तेमाल किया, जैसे कि पौलुस को ग़ैरयहूदियों के मध्य खास तौर पर उपयोग किया (गला0 2:7–8)। पहला पतरस नामक बाइबॅल–पुस्तक में मसीही मुसाफिर के सलीब से स्वर्ग तक की तस्वीर पायी जाती है – अर्थात् इस संसार में अपनी जीवन–यात्रा के दौरान सहे जाने वाले दुःख–दर्द, क्लेश–कष्ट एवं प्रलोभन–परीक्षाओं से लेकर स्वर्ग में पहुंचने पर प्राप्त होने वाली महिमापूर्ण मीरास तक का चित्रण। इसीलिए पतरस अपनी इस पत्री के अन्त में इस सच्चाई की **साक्षी** देता है कि "परमेश्वर का सच्चा अनुग्रह" यही है (प0पत0 5:12)। यहां उद्धार करने वाले अनुग्रह की बात नहीं की गई है, बल्कि मसीही विश्वासी के दैनिक आत्मिक जीवन में प्रभु परमेश्वर की ओर से प्राप्त होने वाले उस अनुग्रह की बात कर रहा है, जो (आत्मिक) शत्रु की समस्त युक्तियों एवं जीवन की समस्त परीक्षाओं (संघर्षों) का सामना करने की क्षमता प्रदान करता है (रोमि0 5:2; इफि0 6:11)। स्वर्गिक मीरास की ओर बढ़ते हुए विश्वासियों के इहलौकिक जीवन–सफर में दुःख, क्लेश

एवं कठिनाईयों का आना सामान्य है। अपने लहू के द्वारा हमें छुटकारा देने वाले प्रभु के नाम में सतावट सहना हमारे (यानि विश्वासी के) लिए आनन्द एवं सौभाग्य की बात होती है; क्योंकि इस दुःख–सहन के द्वारा हम आध्यात्मिक तौर पर परिपक्व होते जाते हैं (प0पत0 5:10)।

दुःख–सहन के बारे में मसीहियों में बड़ी गलतफहमी पाई जाती है; और अक्सर हर कीमत पर इससे बचने की कोशिश की जाती है। इस सम्बन्ध में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि दुःख–सहन मनुष्य के पाप में पतन का परिणाम है। पाप के कारण हम एक पाप–ग्रसित संसार में रहते हैं। पाप के कारण हमारी इस शापित देह को इस पापी जगत में दुःख, बीमारी एवं मृत्यु का अनुभव (सहन) करना पड़ता है। इस प्रसंग में यह भी याद रखना जरूरी है कि मसीह में विश्वास हमारे जीवन की इहलौकिक भौतिक परिस्थितियों में किसी प्रकार के बदलाव की गारन्टी नहीं देता। प्रलोभन, परीक्षा एवं दुःख–सहन इस जीवन का स्वाभाविक अंश है (प0पत0 2:21–23)। मसीह यीशु ने हमारे बदले असीम दुःख सहन किया। हमारा दुःख–सहन, हमारे बदले उसके द्वारा सहन किए गये असीम दुःख का एक बहुत ही हल्का सा आभास प्रदान करता है।

पवित्र वचन यह भी दर्शाता है कि अक्सर दुःख–सहन का उपयोग करके परमेश्वर हमें पाप से दूर रखता है। प्रभु परमेश्वर अपने विश्वासियों को सिद्धता की ओर बढ़ाने हेतु भी दुःख–सहन का उपयोग करता है।

उसके प्रति सच्ची विश्वसनीयता तथा उसकी बुलाहट के प्रति सच्ची श्रद्धा–भक्ति के कारण दुःख–सहन करने वाले विश्वासी, उसका तथा उसके लोगों की साक्षी का तिरस्कार करने वाले इस संसार में रहते हुए भी, उसके साथ एक विशिष्ट सुसंगति का एहसास करते हैं। बहरहाल, ऐसे मसीही दुःख–सहन का अन्त–फल सुनिश्चित है, और इसके अनन्तकालीन परिणाम के समक्ष यह क्षणिक कष्ट–सहन नगण्य है (प0पत0 4:1; दू0कुरि0 4:17;12:7; इब्रा0 12:6–11)।

स्मरण रहे, विश्वासी होने का मतलब यह नहीं कि हम पाप (के स्राप) के समस्त परिणामों से छुटकारा पा गए; क्योंकि आदम के पाप में पतन के समय दिया गया शाप अभी हटाया नहीं गया है। इसके अतिरिक्त, विश्वासी होने पर, यह संसार (संसारिकता) हमारा विरोधी हो जाता है; क्योंकि अब हम संसारिक संगति–सहभागिता के बजाय मसीह की संगति–सहभागिता में लवलीन होने लगते हैं। इस संदर्भ में, "मसीह के साथ" दुःख–सहन और "उसके लिए" दुःख–सहन में भिन्नता को भी पहचानना आवश्यक होता है। उसके स्वभाव में सहभागी होने के कारण तथा इहलौकिक विपरीत परिस्थितियों में जीवन व्यतीत करने के कारण सभी मसीही विश्वासी "उसके साथ" दुःख उठाते हैं। परन्तु "उसके नाम के लिए" दुःख उठाने में अपमान, निन्दा, घोर उत्पीड़न और यहां तक कि मृत्यु का शामिल होना भी सम्भव है (रोमि0 8:17; प्रेरि0 5:41;9:16)।

संत पौलुस ने गलातियों की पत्री के दूसरे अध्याय में यह लिखा है कि यरूशलेम की मंडली के अगुवों से विचार–विमर्श के पश्चात् उसे ग़ैरयहूदियों के मध्य तथा प्रेरित पतरस को यहूदियों के मध्य सुसमाचार कार्य सौंपा गया। इसके साथ ही **रोमियों** नामक पुस्तक में, पौलुस यह भी स्पष्ट करता है कि अब "मसीह में" सभी विश्वासी एक हैं – न कोई यहूदी और न कोई ग़ैरयहूदी। **पहला** पतरस नामक यह पत्री उत्पीड़न सह रहे मसीही विश्वासियों को लिखी गई थी। यद्यपि यह पत्री, प्रमुखतः यहूदी पृष्ठभूमि से मसीही विश्वासी हुए लोगों को लिखी गई थी, तथापि इसमें पतरस द्वारा लिपिबद्ध सच्चाईयां कलीसिया के सभी विश्वासियों के लिये व्यवहारिक हैं, जैसे कि पौलुस द्वारा लिपिबद्ध वचन भी यहूदी पृष्ठभूमि के मसीहियों के लिए उपयोगी है, क्योंकि हम सब मसीह की देह के अंग हैं। यद्यपि पतरस की इन पत्रियों के लिखे जाने की तिथि के बारे में अनिश्चयता पाई जाती है, तथापि अधिकतर लोगों का विचार यह है कि इन्हें सन् 66–67 ईस्वी के आसपास लिखा गया था। **दूसरा पतरस** नामक पत्री से इतना इशारा मिलता है कि पतरस की इन पत्रियों को लिखे जाने के समय पौलुस द्वारा लिखी गई कुछेक पत्रियां कलीसियाओं में प्रचलित थीं (दू0पत0 3:15–16)।

2

"यीशु मसीह के प्रेरित, पतरस की ओर से, तुम परदेशियों के नाम जो पुन्तुस, गलातिया, कप्पद्किया, एशिया और बिथुनिया में तितर–बितर होकर रह रहे हो, और पिता परमेश्वर के पूर्व–ज्ञान के अनुसार तथा आत्मा के पवित्र करने के द्वारा यीशु मसीह की आज्ञा पालन करने और उसके लहू के छिड़के जाने के लिए चुने गए हो : तुम्हें अनुग्रह और शान्ति बहुतायत से मिले" (प0पत0 1:1–2)। यह पत्री मसीह यीशु को अपना उद्धारकर्ता मानकर उस पर विश्वास करने वाले उन यहूदियों को लिखी गई थी जो सतावट के कारण विभिन्न स्थानों पर तितर–बितर हो गए थे। पतरस यहां पहले पद में उन्हें "चुने गए" लोग कहता है, अर्थात् वे परमेश्वर द्वारा चुने हुए लोग थे। "परमेश्वर के पूर्व–ज्ञान के अनुसार" चुने गए लोग। प्रभु परमेश्वर सदा–सर्वदा से यह जानता था कि पवित्र आत्मा के पवित्रीकरण कार्य के द्वारा वह इन विश्वासियों को मसीह के स्वभाव में ढालने के लिए चुनेगा। परमेश्वर की प्रत्येक संतान के लिए उसका यही उद्देश्य है – ख्रीष्त के स्वभाव में ढालना (रोमि0 8:28–29)। अपने उद्धार–प्राप्ति के समय, ख्रीष्त द्वारा पूर्ण किए जा चुके उद्धार–कार्य के आधार पर, हम "मसीह में" स्थापित किए गये तथा परमेश्वर की दृष्टि में हमें पवित्रता की अवस्था

(अधिकार) प्रदान की गई। हमारे वास्ते पूर्ण किए जा चुके ईश्वरीय कार्य को जब हम विश्वास के सहारे अपनाते हैं और उस पर आशा–भरोसा रख कर जीवन बिताते हैं, तब यह हमारे दैनिक जीवन–अनुभव का अंग होता जाता है। नतीज़तन हममें आज्ञाकारिता उत्पन्न होती है। **रोमियों** की पुस्तक के पहले अध्याय का पांचवां पद यह बताता है कि आज्ञाकारिता तो विश्वास का एक फल है।

"हमारे प्रभु यीशु मसीह के पिता परमेश्वर की स्तुति हो, जिसने यीशु मसीह के मृतकों में से जिला उठाने के द्वारा, अपनी अपार दया के अनुसार, एक जीवित आशा के लिए हमें नया जन्म दिया" (प0पत0 1:3)। चूंकि हम प्रभु परमेश्वर की "अपार दया" से नया जीवन पाए हैं, इसलिए उसकी स्तुति, प्रशंसा एवं धन्यवाद करना है। उसके प्रचुर अनुग्रह (जिसके हम अपात्र थे उसे पाने) के कारण ही हमें एक नई, सच्ची एवं जीवन्त आशा प्रदान की गई है जो कि यीशु मसीह के पुनरुत्थान (के अनुसार उसी) पर आधारित है। मसीह यीशु का पुनरुत्थान इस सच्चाई का प्रमाण है कि **उसके** बलिदान द्वारा चुकता किए गये पाप के दंड–मूल्य (मृत्यु) से प्रभु परमेश्वर पूर्णतः संतुष्ट है और इसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु (बलिदान) द्वारा सम्पन्न किए गये उद्धार–कार्य से प्राप्त होने वाली वह सब आशिषें विश्वासियों के लिए उपलब्ध हैं जिनकी पवित्र वचन में प्रतिज्ञा की गई है। यदि मसीह यीशु के बलिदान से पिता परमेश्वर संतुष्ट नहीं होता तो वह कब्र में ही पड़ा रहता।

"कि उस उत्तराधिकार को प्राप्त करें जो अविनाशी, निष्कलंक और अमिट है और तुम्हारे लिए स्वर्ग में सुरक्षित है। तुम्हारी रक्षा परमेश्वर के सामर्थ्य के द्वारा विश्वास से उस उद्धार के लिए की जाती है जो अंतिम समय में प्रकट होने पर है। इससे तुम अति आनन्दित होते हो, भले ही तुम्हें अभी कुछ समय के लिए विभिन्न परीक्षाओं के द्वारा दुःख उठाना पड़ा हो कि तुम्हारा विश्वास – जो आग में ताए हुए नश्वर सोने से भी अधिक बहुमूल्य है – परखा जाकर यीशु मसीह के प्रकट होने पर प्रशंसा, महिमा और आदर का कारण ठहरे। तुमने तो उसे नहीं देखा, तौभी तुम उस से प्रेम करते हो। और यद्यपि तुम उसे अभी भी नहीं देखते, फिर भी उस पर विश्वास करते हो और ऐसे आनन्द से आनन्दित होते हो जो वर्णन से बाहर और महिमा से परिपूर्ण है" (प0पत0 1:4–8)। रोमियों की पत्री के आठवें अध्याय के सत्रहवें पद के अनुसार "यदि हम संतान हैं तो... मसीह के सह–उत्तराधिकारी" हैं। जो वह है और जो कुछ उसका है, सब कुछ उसके लोगों का है। पतरस अपनी पत्री के इस पद में यह लिखता है कि उसके विश्वासियों को मिलने वाली मीरास "अविनाशी" है। अर्थात् यह उत्तराधिकार न तो पुराना होता है, न ही सड़ता या खराब होता है। इसका अस्तित्व भी खत्म नहीं होता है और न ही इसके प्रभाव में कोई कमी आती है। हमें प्राप्त होने वाली यह अद्‌भुत मीरास मलिन या अशुद्ध नहीं, बल्कि पूर्णतः शुद्ध व पवित्र है, क्योंकि यह परमेश्वर की ओर से है तथा हमारे वास्ते मसीह द्वारा प्राप्त की गई मीरास है। चूंकि इस

अनुपम मीरास की प्राप्ति में मसीह के अलावा अन्य किसी मानवीय कर्म–प्रयास का कोई योगदान नहीं है, इसलिए यह कभी भी किसी प्रकार से मलिन या अशुद्ध नहीं हो सकती। इसके साथ ही साथ पतरस यह भी कहता है कि मसीह में प्राप्त यह मीरास मुरझाने वाली नहीं (अमिट) है, बल्कि हमारे लिए "स्वर्ग में सुरक्षित" है। इस मीरास का मानव जीवन पर पड़ने वाला प्रभाव कभी कम या धूमिल नहीं होगा, अर्थात् इसकी सत्यता एवं निरन्तरता अनन्तकालीन है। भला स्वर्ग से ज्यादा सुरक्षित स्थान और कहां हो सकता है? अतएव यह "स्वर्ग में सुरक्षित" मीरास सदा–सर्वदा के लिए है अर्थात् "अमिट"।

विश्वासियों के लिए उपलब्ध मीरास की बात करने के बाद, पतरस ने पांचवें पद से विश्वासीजन की बात की है। विश्वासीजन उद्धार के लिए विश्वास के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ्य से सुरक्षित रखा जाता है। यह पत्री जिन मसीही यहूदियों को लिखी गई थी, वे अपने ईमान के लिए घोर उत्पीड़न सह रहे थे। अतः पतरस उन्हें इस सत्य के प्रति उत्साहित कर रहा था कि उनका उद्धार सुनिश्चित है क्योंकि स्वयं परमेश्वर की सामर्थ्य के द्वारा इसकी रक्षा की जा रही है। उनके उद्धार की संरक्षा उनके अपने किसी कर्म–प्रयास या उनकी अपनी ताकत पर निर्भर नहीं थी, और यह उनके लिए अत्यन्त आनन्दकर बात थी। वे लोग जिन तमाम कठिनाईयों एवं परेशानियों को झेल रहे थे, उन सबके पीछे परमेश्वर का उद्देश्य उन्हें उनके विश्वास में सुस्थिरता, परिपक्वता एवं सिद्धता की ओर बढ़ाना था।

अक्सर प्रभु परमेश्वर इसी उद्देश्य से हमारे जीवन में प्रलोभन, परीक्षाएं एवं कठिनाईयां आने देता है। याकूब की पत्री के पहले अध्याय के प्रारम्भिक पदों में यह लिखा है कि ऐसी परीक्षाओं एवं परेशानियों अर्थात् हमारे विश्वास के परखे जाने के द्वारा धैर्य, परिपक्वता, पूर्णता या सिद्धता का विकास होता है (प0पत0 5:10)।

शारीरिकता के अनुसार जीवन बिताने पर हमारा ध्यान—मन हमारी इहलौकिक परिस्थितियों पर ही केन्द्रित रहेगा और हमारी मनोवृत्ति (चाल—चलन) भी इसी से प्रभावित होगी। पौलुस ने "विश्वास" को सोने से भी ज्यादा बहुमूल्य बताया है। सोना इतना बहुमूल्य क्यों है? क्योंकि यह एक दुर्लभ, विरल, दुष्प्राप्य, उत्कृष्ट एवं असाधारण वस्तु है। परन्तु कठिनाईयों और परीक्षाओं के मध्य विश्वासीजन के हृदय को लंगर समान स्थिरता प्रदान करने वाला मसीही **विश्वास** सोने से भी अधिक विरल एवं बहुमूल्य है। प्रेरित पतरस के अनुसार परेशानियों एवं परीक्षाओं के मध्य ऐसा उत्कृष्ट (बहुमूल्य) विश्वास प्रभु यीशु मसीह के पुनरागमन के समय "प्रशंसा, महिमा और आदर का कारण" ठहरेगा। पतरस कहता है कि यद्यपि उन विश्वासियों ने प्रभु यीशु को भौतिक रूप में नहीं देखा था, तब भी उस पर विश्वास एवं **उससे** प्रेम रखते थे और इससे अत्यन्त आनन्दित थे। आत्मा के चलाए चलने वाला विश्वासीजन मसीह में लवलीन रहता है, न कि बाह्य भौतिक परिस्थितियों में। इसीलिए दुःख, परेशानी व परीक्षाओं का सामना करते हुए भी सच्चे विश्वासी के लिए

(आत्मिक तौर पर) आनन्दित रहना सम्भव है, क्योंकि ऐसे विश्वासी की दृष्टि मसीह पर लगी रहती है (जो उसके जीवन का आधार है और उसमें वास करता है)।

"अतः कार्य करने के लिए अपनी बुद्धि की कमर कस कर आत्मा में संयमित हो जाओ। अपनी पूरी आशा उस अनुग्रह पर रखो जो तुम्हें यीशु मसीह के प्रकट होने पर दिया जाने वाला है। आज्ञाकारी बच्चों के सदृश अपनी अज्ञानता के समय की पुरानी अभिलाषाओं के अनुसार आचरण न करो। परन्तु जैसे तुम्हारा बुलाने वाला पवित्र है, वैसे ही तुम भी समस्त आचरण में पवित्र बनो, क्योंकि यह लिखा है, 'तुम पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूं'" (प0पत0 1:13–16)। पतरस कहता है कि चूंकि इन पदों में (तथा इसके पूर्व के पदों में) वर्णित सब बातें सच हैं, और हमें इतना अद्‌भुत (महान) उद्धार प्रदान किया गया है, इसलिए हमें नये–ताजे एवं गम्भीर मन से "आत्मा में संयमित" होना है (अर्थात् आत्मा के चलाए – आत्मिक मन, विचार व भावना के साथ)। स्मरण रहे, शारीरिकता की जड़ शैतान में है और शैतान धोखेबाजी का उस्ताद है। इस प्रकार जब कभी हम शारीरिकता की मानसिकता में होते हैं तब हम धोखे में होते हैं और सच्चे आत्मिक या संयमित मनोवृत्ति में नहीं होते। ऐसा जन अपना सच्चा आशा–भरोसा परमेश्वर के उस अद्‌भुत अनुग्रह पर नहीं रखेगा, जो मसीह के पुनरागमन के समय **प्रकट** होने वाला है। अतः पतरस यह कहता है कि हमें उद्धार पाने से पहले जैसी शारीरिक अभिलाषाओं को पूरा करने वाला शारीरिकता का जीवन जीने

के बजाय विश्वासपूर्ण आज्ञाकारी जीवन जीना चाहिए। हमें बुलाने वाला प्रभु परमेश्वर है। वह पवित्र है। उसने जीवन एवं ईश्वर–भक्ति सम्बन्धी समस्त आवश्यकताओं को प्रदान कर दिया है (दू0पत0 1:3)। इसलिए विश्वासी को अपने समस्त जीवन–आचरण में पवित्र होने की क्षमता प्राप्त है। वर्तमान समय में, प्रभु परमेश्वर, हमें शारीरिकता के बजाए आत्मा के चलाए चलने की प्रशिक्षण–प्रक्रिया द्वारा प्रशिक्षित कर रहा है। इसके द्वारा **वह** हमारे जीवन को मसीह के स्वभाव में ढाल रहा है। इस प्रकार प्रभु हमें पवित्रता में विकसित कर रहा है, क्योंकि **वह पवित्र** है। उत्पत्ति की पुस्तक के पहले अध्याय के छब्बीसवें पद के अनुसार मनुष्य को परमेश्वर के (प्रतिरूप या प्रतिबिम्ब) स्वरूप में रचा गया था। परन्तु पाप में पतन के पश्चात् मनुष्य "आदम के स्वरूप एवं समानता" के अनुसार पैदा होने लगे (उत्प0 5:3)। तात्पर्य यह है कि हम परमेश्वर से पृथकता एवं पाप–स्वभाव से ग्रसित अवस्था में पैदा हुए हैं। अब प्रभु यीशु मसीह के विश्वासी होने पर "मसीह में" उसके स्वरूप (प0पत0 1:15) के अनुसार हमें नया जन्म मिला है।

"पर जबकि तुम 'हे पिता' कहकर उस से प्रार्थना करते हो जो बिना पक्षपात के, प्रत्येक का न्याय उसके कामों के अनुसार करता है, तो तुम पृथ्वी पर रहने का अपना समय भय सहित व्यतीत भी करो। क्योंकि तुम जानते हो कि उस निकम्मे चाल–चलन से जो तुम्हें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ, तुम्हारा छुटकारा सोने–चांदी जैसी नाशवान् वस्तुओं से नहीं, परन्तु निर्दोष और निष्कलंक

मेमने, अर्थात् मसीह के बहुमूल्य लहू के द्वारा हुआ है। वह तो सृष्टि की उत्पत्ति से पहिले ही जाना गया था, परन्तु तुम्हारे लिए इन अंतिम दिनों में प्रकट हुआ। तुम उसके द्वारा परमेश्वर में विश्वासी हो। परमेश्वर ने उसे मृतकों में से जिलाया और महिमा दी – इसलिए तुम्हारा विश्वास और आशा परमेश्वर पर है। जबकि तुमने भाईचारे के निष्कपट प्रेम के लिए सत्य का पालन करके अपनी आत्माओं को पवित्र किया है तो हृदय की सच्ची लगन के साथ एक दूसरे से प्रेम करो, क्योंकि तुमने नाशमान नहीं वरन् अविनाशी बीज से, अर्थात् परमेश्वर के जीवित तथा अटल वचन द्वारा नया जन्म प्राप्त किया है क्योंकि, 'सब प्राणी घास के सदृश हैं, और उनकी सारी शोभा घास के फूल के सदृश है। घास सूख जाती है, और फूल झड़ जाता है, परन्तु प्रभु का वचन युगानुयुग स्थिर रहता है'" (प0पत0 1:17–25)। प्रभु यीशु मसीह के समस्त विश्वासी एक दिन 'मसीह के न्याय–आसन' के समक्ष उपस्थित होंगे, जहां "प्रत्येक को अपने भले या बुरे कामों" के निष्पक्ष न्याय का सामना करना होगा (दू0कुरि0 5:10)। अतः इस धरती पर अपना समय परमेश्वर के प्रति सच्चे आदर–मान (भय) में व्यतीत करें।

हमारा उद्धार सोने–चांदी से नहीं हुआ है और न ही हमारे पूर्वजों से प्राप्त निकम्मी परम्पराओं द्वारा। वास्तविकता यह है कि हमारा उद्धार (विमोचन, छुटकारा) मसीह के निष्कलंक एवं बहुमूल्य लहू द्वारा हुआ है। चूंकि हमारा विमोचन इतनी बहुमूल्य वस्तु से हुआ है, इसलिए यह भी

याद रखना उचित है कि परमेश्वर की दृष्टि में यह बहुत ही गम्भीर बात है। परमेश्वर के एकलौते पुत्र के अमूल्य लहू से खरीदे गए लोगों द्वारा स्वार्थी एवं शारीरिक जीवन व्यतीत करना हल्की बात नहीं है। ऐसा शारीरिकतापूर्ण आचरण परमेश्वर की दृष्टि में अत्यन्त गम्भीर बात है, क्योंकि उनके छुटकारे का मूल्य उसके "पुत्र" के लहू द्वारा दिया गया है। यहां यह भी कहा गया है कि हमारा उद्धार परमेश्वर के वचन रूपी "बीज" से अंकुरित हुआ है जो कि शाश्वत् एवं अनश्वर है (यूह0 1:1)। इहलौकिक जीवन की जिन बातों या वस्तुओं पर मनुष्य अहंकार करता है, वह सब अस्थायी एवं नाशवान हैं; लेकिन परमेश्वर का वचन सदा–सर्वदा तक बना रहेगा। अतः परमेश्वर के वचन की महत्ता तथा हमारे जीवन में इसकी उपयोगिता का महत्व बहुत महान है।

3

"इसलिए सब प्रकार का बैर–भाव, छल और पाखंड, द्वेष और हर प्रकार की निन्दा को दूर रख कर, नवजात शिशुओं के समान शुद्ध आत्मिक दूध के लिए लालायित रहो, जिससे कि तुम उद्धार में बढ़ते जाओ, क्योंकि तुमने प्रभु की कृपा का स्वाद चख लिया है" (प0पत0 2:1–3)। यह बुराईयां कैसे दूर रखी (या उतारी) जा सकती हैं? गलातियों की पत्री के पांचवें अध्याय के सोलहवें पद के अनुसार, "पवित्र आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शारीरिक लालसाओं को किसी रीति से पूरा नहीं करोगे"। जैसे–जैसे हम शारीरिकता के बजाय आत्मा के चलाए चलने की आध्यात्मिक प्रशिक्षण–प्रक्रिया में उन्नति करते हैं, वैसे–वैसे शारीरिकता के कामों को त्यागने में और आत्मा के फलों को प्रकट करने में विकसित होते रहते हैं; और इस प्रकार हममें परमेश्वर तथा उसके वचन के ज्ञान की भूख–प्यास भी बढ़ती जाती है।

"अब उस जीवित पत्थर के पास आकर जिसे मनुष्यों ने तो ठुकरा दिया था, परन्तु जो परमेश्वर की दृष्टि में चुना हुआ और मूल्यवान है, तुम भी जीवित पत्थरों के समान एक आत्मिक भवन बनते जाते हो, जिससे पुरोहितों का एक पवित्र समाज बन कर ऐसे आत्मिक बलिदान चढ़ाओ जो यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर को ग्रहणयोग्य हों। क्योंकि पवित्रशास्त्र में लिखा है : 'देखो, मैं सिय्योन में एक चुना हुआ पत्थर, स्थापित करता हूं, और जो उस पर विश्वास करता है, वह कभी निराश न होगा'। अतः तुम

विश्वासियों के लिए यह पत्थर बहुमूल्य है, परन्तु अविश्वासियों के लिए : 'जिस पत्थर को राजमिस्त्रियों ने ठुकरा दिया था, वही कोने का पत्थर बन गया,' और, 'ठेस लगने का पत्थर तथा ठोकर खाने की चट्टान,' क्योंकि वचन का पालन न करके वे ठोकर खाते हैं और इसी विनाश के लिए वे नियुक्त भी किए गये थे" (प0पत0 2:4—8)। जब प्रभु यीशु देहधारी होकर इस धरती पर आया तब संसार ने उसे अस्वीकार किया, लेकिन कलीसिया के "कोने का पत्थर" होने के लिए वही परमेश्वर का अभिषिक्त किया (चुना) हुआ विशिष्ट जन था। हम विश्वासीजन, उन बहुमूल्य पत्थरों के समान हैं जिन्हें प्रभु परमेश्वर अपनी कलीसिया रूपी इमारत के निर्माण में इस्तेमाल करता जा रहा है। "परमेश्वर के भवन" के रूप में विश्वासियों के इहलौकिक जीवन का प्रमुख उद्देश्य इस दुनिया में उपस्थिति दर्शाना तथा आत्मिक भेंट चढ़ाना है, और यह (आत्मिक) कार्य पवित्र आत्मा के चलाए ही सम्भव है। हां, संसार प्रभु यीशु को अस्वीकार करता है; लेकिन उस पर अपनी आशा और भरोसा रखने वाले लोग कभी लज्जित नहीं होंगे। इस दुनिया में, अविश्वासी लोग अक्सर विश्वासियों को लज्जित करने की कोशिश करते हैं। बहरहाल, अन्ततः उन्हें भी लज्जित होना पड़ेगा।

"परन्तु तुम एक चुना हुआ वंश, राजकीय याजकों का समाज, एक पवित्र प्रजा, और परमेश्वर की निज सम्पत्ति हो, जिस से तुम उसके महान गुणों को प्रकट करो जिसने तुम्हें अंधकार से अपनी अद्भुत ज्योति में बुलाया है। एक समय तुम तो प्रजा न थे पर अब परमेश्वर की प्रजा हो। उस समय तुम पर दया न हुई थी, पर अब दया हुई है" (प0पत0 2:9—10)। यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रभु

परमेश्वर ने हमें अपनी समीपता में बुलाया है और हमें अपनी संतान बनाया है। अब हम उसकी "निज सम्पत्ति" हैं और अब हमारे जीवन द्वारा "उसके महान गुणों" का प्रकटन होना है। इससे पहले हम आत्मिक तौर पर मरे हुए तथा नरक के रास्ते पर थे। परन्तु अब हम परमेश्वर की प्रजा हैं। हमें प्रभु परमेश्वर ने अपना बहुमूल्य अनुग्रह एवं अपनी कृपा प्रदान की है। इसमें उसके साथ अनन्त जीवन रूपी आशिष भी शामिल है। प्रभु परमेश्वर ने पूर्णतः भ्रष्ट एवं दंडनीय मनुष्यों को अपने असीम अनुग्रह द्वारा अपनी संतान बनाया ताकि वे इस "खोए हुए" संसार में उसके "महान गुणों" को प्रदर्शित कर सकें।

"हे प्रियों, मैं तुम से आग्रह करता हूं कि अपने आप को परदेशी व यात्री जानकर उन शारीरिक वासनाओं से दूर रहो जो आत्मा के विरुद्ध युद्ध करती हैं। अन्य जातियों के मध्य अपना चाल–चलन उत्तम बनाए रखो, जिस से वे जिन बातों में कुकर्मी कहकर तुम्हारी निन्दा करते हैं, उन्हीं बातों में तुम्हारे भले कामों को देखकर न्याय के दिन परमेश्वर की महिमा करें" (प0पत0 2:11–12)। बेशक यह संसार पाप व पतन से ग्रस्त है। परमेश्वर की दृष्टि में, उसकी संतानों की स्थाई नागरिकता अब इस दुनिया की नहीं, बल्कि स्वर्गिक है। इसीलिए यहां हमें "परदेशी व यात्री" कहा गया है (फिलि0 3:20)। आत्मा की अधीनता में जीवन व्यतीत करने वाले विश्वासी दुनिया में स्वयं को परदेशी समझकर इस सफर में आगे बढ़ते हैं और इनका जीवन आचरण दुनियावी लोगों से भिन्न होता है, क्योंकि दुनियावी लोग अपनी शारीरिक अभिलाषाओं में ही लवलीन रहते हैं। अपनी संसारी नागरिकता (जीवन) पर अहंकार करने वालों की यह एक प्रमुख पहचान है (गला0

5:19–21)। बहरहाल, मसीही विश्वासियों के प्रति अविश्वासियों के विरोधपूर्ण व्यवहार के बावजूद जैसे–जैसे विश्वासीजन (पवित्र) आत्मा के चलाए जीवन व्यतीत करने में उन्नति करता है, वैसे–वैसे उसके क्रूसित जीवन स्वभाव के प्रभाव में कुछ लोग प्रभु की ओर उन्मुख होंगे जिससे (ख्रीष्त के पुनरागमन के समय) प्रभु परमेश्वर की **महिमा** होगी।

"प्रभु के लिए प्रत्येक मानवीय शासन–प्रबन्ध के अधीन रहो, चाहे राजा के, जो अधिकारी है, या राज्यपालों के, जो उसके द्वारा कुकर्मियों को दंड और सुकर्मियों की प्रशंसा करने के लिए भेजे जाते हैं। क्योंकि परमेश्वर की इच्छा यही है कि तुम भले काम करके अज्ञानता की बातें बोलने वाले मूर्ख मनुष्यों का मुंह बन्द कर दो। स्वतंत्र मनुष्यों के समान कार्य करो, पर अपनी स्वतंत्रता को बुराई के लिए आड़ न बनाओ। परमेश्वर के दासों की भांति उसका उपयोग करो" (प0पत0 2:13–16)। ख्रीष्त–जीवन जीने वाले विश्वासियों द्वारा अपने शासकीय अधिकारियों का आदर–मान करना संसार के लोगों के समक्ष एक खास साक्षी होती है और इससे विरोधियों का भी "मुंह बन्द" हो सकता है। (पवित्र) आत्मा के चलाए चलते हुए ख्रीष्त–जीवन जीने वाले विश्वासी स्वतंत्रतापूर्वक (स्वेच्छापूर्वक) आज्ञा–पालन करना चाहते हैं, (न कि किसी दबाव में); और ऐसे लोग अपनी आत्मिक स्वतंत्रता को बुराई करने का बहाना नहीं बनाते (गला0 5:13)। विश्वासीजन पाप के अधिकार की अधीनता से इसलिए स्वतंत्र किया गया है कि "**परमेश्वर का दास**" हो जाए।

"सब का आदर करो, भाईयों से प्रेम रखो, परमेश्वर का भय मानो, और राजा का सम्मान करो। हे सेवकों, आदरपूर्वक अपने स्वामियों के अधीन रहो – केवल उन्हीं के नहीं जो भले और विनम्र हैं, परन्तु उनके भी जो निर्दयी हैं। क्योंकि यदि कोई परमेश्वर के प्रति शुद्ध विवेक के कारण दुःख उठाते हुए अन्याय को धीरज से सहता है तो वह प्रशंसा का पात्र है। जब तुम पाप करते हो और तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार होता है, तब यदि तुम बड़े धैर्य से सहते हो तो उसमें प्रशंसा की क्या बात है? परन्तु उचित कार्य करके सताए जाने पर, यदि धीरज से सहते हो तो इस से परमेश्वर प्रसन्न होता है। तुम इसी अभिप्राय से बुलाए गए हो, क्योंकि मसीह ने भी तुम्हारे लिए दुख सहा और तुम्हारे लिए एक आदर्श रखा कि तुम भी उसके पद–चिन्हों पर चलो। उसने न तो कोई पाप किया और न उसके मुंह से छल की कोई बात निकली। उसने गाली सुनते हुए गाली नहीं दी, दुख सहते हुए धमकियां नहीं दीं, पर अपने आप को उसके हाथ सौंप दिया जो धार्मिकता से न्याय करता है। उसने स्वयं अपनी देह में क्रूस पर हमारे पापों को उठा लिया, जिस से हम पाप के लिए मरें और धार्मिकता के लिए जीवन व्यतीत करें, क्योंकि उसके घावों से तुम स्वस्थ हुए हो। तुम तो भेड़ों की भांति भटक रहे थे, परन्तु अब अपनी आत्मा के चरवाहे और अध्यक्ष के पास लौट आए हो" (प0पत0 2:17–25)। यहां आत्मा के अधीन जीवन तथा शारीरिकता के अधीन जीवन में भिन्नता को दर्शाया गया है। शारीरिकता के अनुसार जीवन बिताने पर हमारा ध्यान–मन सिर्फ अपने स्वार्थ, अपने हक और अपनी अभिलाषाओं को पूरा करने पर लगा रहता है। ऐसा व्यक्ति पतरस द्वारा वर्णित दुःख–सहन से दूर भागता है, क्योंकि

वह स्व–सुख एवं स्वार्थ–सिद्धि में ही लिप्त रहना पसन्द करता है। ऐसा शारीरिक जन दूसरों से सच्चा प्रेम करने अथवा दूसरों के प्रति सच्चा आदर–मान रखने में असमर्थ होता है। इसके विपरीत आत्मा की अधीनता में जीवन व्यतीत करने वाला जन प्रभु यीशु मसीह में लवलीन रहता है, उसके (मसीह) द्वारा पूर्ण किए गये उद्धार–कार्य पर विश्वास–विश्राम करता है और उसके जीवन–आचरण से आत्मा के फल प्रकट होते हैं। ऐसे आत्मिक जन की मनोवृत्ति पर बाह्रय परिस्थितियों का नियंत्रण नहीं रहता। ऐसा विश्वासी व्यक्ति (ख्रीष्त की तरह) सही एवं सच्चा न्यायकर्ता पिता परमेश्वर पर ही आशा–भरोसा रखता है।

शारीरिकता में जीवन व्यतीत करते हुए हम अन्यायपूर्ण न्याय, निर्णय, आलोचना एवं टीका–टिप्पणी करते हैं। शारीरिक जन अक्सर ऐसी कुछ बातों के लिए दूसरों की आलोचना करता, दोषी ठहराता है और उन्हें दंडित करना चाहता है जिनका वह स्वयं शिकार होता है। प्रभु यीशु मसीह के जीवन–उदाहरण पर ध्यान देने पर हम यह देखते हैं कि उसने अपने आप को पिता परमेश्वर एवं उसकी इच्छा के अधीन सौंपा ताकि उसके जीवन में ईश्वरीय इच्छा पूरी हो। जैसे–जैसे हम आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर आगे बढ़ते हैं, वैसे–वैसे हम में भी यही (मसीह समान) मनोवृत्ति विकसित होती है – अपने जीवन को पिता परमेश्वर के हाथों में सौंपते रहने की प्रवृत्ति, मात्र उसकी इच्छा के अनुसार इस्तेमाल होने की आकांक्षा, प्रत्येक परिस्थिति में ऐसे ही विश्वास एवं भरोसे के साथ उस पर यह आशा रखने की मनोवृत्ति कि सर्वसत्ताधारी परमेश्वर सब बातों के द्वारा अपनी महिमा करेगा।

4

"इसी प्रकार, हे पत्नियों, अपने–अपने पति के अधीन रहो जिस से यदि उनमें से कुछ वचन का पालन न करते हों, तो वे तुम्हारे पवित्र और सम्माननीय चाल–चलन को ध्यानपूर्वक देखकर वचन बिना ही अपनी अपनी पत्नियों के व्यवहार से जीते जाएं। तुम्हारा श्रृंगार केवल दिखावटी न हो, जैसे बालों को गूंथना, सोने के आभूषण और विभिन्न प्रकार के वस्त्र पहिनना, वरन् यह तुम्हारा आंतरिक व्यक्तित्व हो, जो नम्र और शांत मन वाले अविनाशी आभूषणों से सुसज्जित हो, जिसका परमेश्वर की दृष्टि में बड़ा मूल्य है। क्योंकि पूर्वकाल में पवित्र स्त्रियां भी जो परमेश्वर में आस्था रखती थीं अपने अपने पति के अधीन रहकर अपने को इसी रीति से सजाती–संवारती थीं। इस प्रकार सारा, इब्राहीम को स्वामी कहकर उसके अधीन रहती थी। यदि तुम भी बिना भयभीत हुए वही करो जो उचित है तो उसकी बेटियां ठहरोगी" (प0पत0 3:1–6)। ध्यान देने योग्य बात है कि इन पदों की मुख्य शिक्षा पत्नियों को **आत्मा** के अधीन जीवन व्यतीत करने का प्रोत्साहन प्रदान करती हैं। आत्मा के चलाए चलने वाली पत्नी का मन ख्रीष्त में लवलीन रहता है और ऐसी महिला के लिए पतरस की उपर्युक्त शिक्षा का पालन करना

असम्भव नहीं होगा। शारीरिकता के अनुसार जीने वाली पत्नी सिर्फ स्वार्थ–सिद्धि और दिखावे में ही लगी रहेगी।

"इसी प्रकार, हे पतियों, तुम में से प्रत्येक अपनी पत्नी के साथ समझदारी से रहे, उसे निर्बल पात्र जाने, क्योंकि वह स्त्री है। वह जीवन के अनुग्रह में संगी वारिस जानकर उसका आदर करे, जिससे कि तुम्हारी प्रार्थना में बाधा न पहुंचे" (प0पत0 3:7)। यहां पतियों के लिए निर्देश दिया गया है। पतियों को अपनी–अपनी पत्नी के साथ **समझदारी** से जीवन व्यतीत करने का प्रोत्साहन प्रदान किया गया है। सृष्टिकर्ता परमेश्वर ने स्त्री और पुरुष को भिन्न बनाया है, और घर–परिवार में उनकी भूमिका में भी भिन्नता है। प्रभु परमेश्वर ने पुरुष (पति) को परिवार की दासवत् अगुवाई करने वाला आध्यात्मिक मुखिया होने के लिए रचा था, और स्त्री (पत्नी) को उसका सहयोगी (पूरक) होने के लिए। स्त्री की अपेक्षा पुरुष के व्यक्तित्व को शारीरिक, संवेगात्मक एवं अन्य प्रकार से ज्यादा बलवान बनाया गया था ताकि वह अपने घर–परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके और उनकी रक्षा कर सके। उसकी पत्नी को उसकी समझदारी, सुरक्षा तथा प्रेमपूर्ण कृपालुता की जरूरत है। (मसीही) पुरुष को यह भी स्मरण रखना है कि उसकी पत्नी भी "जीवन के अनुग्रह में संगी वारिस" है। पति और पत्नी दोनों के लिए एक समान (ईश्वरीय) अनुग्रह उपलब्ध है।

पतरस आगे यह वाक्यांश भी लिखता है : "जिससे तुम्हारी प्रार्थना में बाधा न पहुंचे"। यदि कोई पुरुष अपनी पत्नी के प्रति समझदारी का व्यवहार नहीं करता, उसकी आवश्यकताओं तथा उसकी सुरक्षा का ख्याल नहीं रखता तो ऐसा पति शारीरिकता के चलाए जीवन व्यतीत कर रहा है। ऐसा पति दुआ–भक्ति की राह पर चलने का दिखावा करते हुए अपनी स्वार्थ–पूर्ति में लगा रहता है। नतीजतन ऐसे व्यक्ति की दुआ ईश्वरीय इच्छा के अनुकूल नहीं होती। जब हमारी प्रार्थना परमेश्वर की इच्छा के अनुसार नहीं होगी तो इसका अवरुद्ध (बाधित) होना सुनिश्चित है (प0यूह0 5:14–15)।

"अन्ततः सब के सब एक मन, कृपालु, भाईयों से प्रेम करने वाले, दयालु और नम्र बनो। बुराई का बदला बुराई से न दो, न गाली के बदले गाली दो, पर आशिष ही दो, क्योंकि तुम इसी अभिप्राय से बुलाए गए हो कि उत्तराधिकार में आशिष प्राप्त करो। क्योंकि 'जो जीवन की अभिलाषा रखता है, और अच्छे दिन देखना चाहता है, वह अपनी जीभ को दुष्टता की बातों से, और अपने होठों को छल की बातें बोलने से रोके रहे। वह दुष्टता से फिर कर भलाई करे, और शांति को ढूंढ़कर उसका पीछा करे। क्योंकि प्रभु की आंखें धर्मियों पर लगी रहती हैं और उसके कान उनकी प्रार्थनाओं की ओर लगे रहते हैं। परन्तु प्रभु दुष्कर्मियों के विमुख

रहता है'" (प0पत0 3:8—12)। यहां पतरस ने ख्रीष्त—जीवन के अन्य कुछ गुणों एवं इनकी व्यवहार्यता का उल्लेख किया है। स्मरण रहे, ऐसा जीवन तभी सम्भव है जबकि हम पवित्रशास्त्र के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं; क्योंकि शारीरिक जन सिर्फ अपनी स्वार्थ—सिद्धि में लगा रहता है। यहां पतरस यह दर्शा रहा है कि आत्मा के अधीन उसके फलों को प्रकट करते हुए (आध्यात्मिक) जीवन व्यतीत करने पर, हमारे साथ अच्छा—बुरा अर्थात् चाहे जैसा व्यवहार हो और चाहे जैसी परिस्थिति आए; अन्ततः सब कुछ हमारे जीवन के लिए आशिष का माध्यम होगा। प्रभु परमेश्वर धर्मियों (आत्मा के अनुसार जीवन आचरण करने वालों) की प्रार्थनाओं (दीनतापूर्ण निवेदन) को सुनता और उत्तर देता है। लेकिन बुराई करने (शारीरिकता का जीवन बिताने) वाले लोग प्रभु परमेश्वर के विरोधी होते हैं; अतः **उसका** उद्देश्य यह होता है कि **वह** उनके जीवन की शारीरिकता को बेपर्द करे।

"यदि तुम अपने आप को भलाई के लिए उत्साही प्रमाणित करो तो तुम्हें हानि पहुंचाने वाला कौन है? फिर भी यदि धार्मिकता के लिए कष्ट सहो तो धन्य हो। उनकी डांट—डपट से न तो भयभीत हो और न ही दुखित हो, परन्तु मसीह को पवित्र प्रभु जानकर अपने हृदय में रखो। अपनी आशा के विषय पूछे जाने पर प्रत्येक पूछने वाले को

सदैव नम्रता व श्रद्धा के साथ उत्तर देने को तत्पर रहो। और अपना विवेक शुद्ध बनाए रखो जिससे कि उन बातों में जिनमें तुम्हारी निंदा होती है, वे लोग जो मसीह में तुम्हारे अच्छे चाल–चलन को तुच्छ जानते हैं, लज्जित हों" (प0पत0 3:13–16)। शारीरिक व्यक्ति की दृष्टि पार्थिव चीजों पर केन्द्रित होती है – इहलौकिक या संसारिक सुख–विलास में लवलीन जीवन–शैली। आत्मा के अधीन जीने वाले व्यक्ति का ध्यान–मन ख्रीष्त में लवलीन रहता है, और ऐसा जन उसी में बने रहने तथा उसी के ज्ञान को औरों तक प्रसारित करने का आकांक्षी होता है। चूंकि हम मसीही विश्वासी हैं, इसलिए हम से बैर करने वाले भी होंगे। प्रमुख बात यह है कि जब हमारे जीवन द्वारा ख्रीष्त–जीवन प्रकट होगा, तब हमारे विरोधियों को हमारे ऊपर अंगुली उठाने का अवसर नहीं मिलेगा।

"क्योंकि यदि परमेश्वर की इच्छा यही हो तो उत्तम यह है कि तुम उचित काम करने के लिए दुख उठाओ, न कि अनुचित काम के लिए। मसीह भी सब के पापों के लिए एक ही बार मर गया, अर्थात् अधर्मियों के लिए धर्मी जिस से वह हमें परमेश्वर के समीप ले आए। शरीर के भाव से तो वह मारा गया, परन्तु आत्मा के भाव से जिलाया गया। उसी में उसने जाकर उन बन्दी आत्माओं को संदेश सुनाया, जो एक समय आज्ञा न मानने वाले थे, अर्थात् उन

दिनों में जब परमेश्वर का धैर्य ठहरा रहा और नूह का वह जहाज़ बन रहा था जिसमें कुछ ही लोग, अर्थात् आठ व्यक्ति ही, जल से सुरक्षित निकले थे। यह पूर्व संकेत बपतिस्मा का है, जिसका अर्थ शरीर की गन्दगी दूर करना नहीं, परन्तु शुद्ध विवेक से परमेश्वर के अधीन होना है। अब तो बपतिस्मा तुम्हें यीशु मसीह के पुनरुत्थान द्वारा बचाता है। वह स्वर्ग में जाकर परमेश्वर के दाहिने ओर विराजमान है, और स्वर्गदूत, अधिकारी और शक्तियां उसके अधीन कर दिये गए हैं” (प0पत0 3:17–22)। इन सब बातों में प्रभु यीशु मसीह ही हमारा आदर्श है – उसने भलाई करते हुए दुःख–सहन किया, न कि बुराई करते हुए। ख्रीष्त ने हमारे पापों के बदले दुःख सहा – अधर्मियों के लिए धर्मीजन ने दुःख–सहन किया, ताकि हमें पिता परमेश्वर की समीपता में पहुंचाए। अतएव मसीह के साथ अपने पुराने मनुष्यत्व के सह–क्रूसित होने की आध्यात्मिक सच्चाई को पहचानते हुए, जब हम आत्मा के अधीन जीवन बिताते हैं, तो हमारे साथ लोगों का चाहे जैसा व्यवहार हो, हम तो उन्हें प्रभु परमेश्वर की समीपता में ही देखने का लक्ष्य रखते हैं। आध्यात्मिक जन अर्थात् आत्मा के चलाए जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति दूसरों को प्रभु के समीप लाने हेतु बुराई को भी सहर्ष सहन कर लेगा।

5

"इसलिए जब कि मसीह ने शरीर में दुख उठाया तो तुम भी इसी अभिप्राय से हथियार धारण करो, क्योंकि जिसने शरीर में दुख उठाया है, वह पाप से छूट गया है। इसलिए शरीर में अपना शेष जीवन मनुष्यों की अभिलाषाओं में नहीं, वरन् परमेश्वर के इच्छानुसार व्यतीत करो। क्योंकि अतीत का जो समय तुमने विषय–भोग, कामुकता, पियक्कड़पन, रंगरेलियों, मद्यपान–गोष्ठियों तथा घृणित मूर्तिपूजाओं में गंवाकर अन्य जातियों के इच्छानुसार कार्य किया, वही पर्याप्त है। इन सब बातों में उनको आश्चर्य होता है कि तुम ऐसे भारी दुराचार में अब उनका साथ नहीं देते, अतः वे तुम्हारा अपमान करते हैं। परन्तु वे उसी को लेखा देंगे जो जीवितों और मृतकों का न्याय करने को तैयार है। इसलिए मरे हुओं को भी सुसमाचार इस अभिप्राय से सुनाया गया कि – यद्यपि शरीर में उनका न्याय मनुष्यों के अनुसार हो – वे आत्मा में परमेश्वर के इच्छानुसार रहें" (प0पत0 4:1–6)। विश्वासियों के लिए पिता परमेश्वर का उद्देश्य यह है कि उनके जीवन को मसीह के स्वभाव में ढाले (गला0 4:19)। यह प्रक्रिया विश्वासी जन के जीवन में 'शारीरिकता के संघर्ष' से शुरू होती है। हम जितना

अधिक अपनी शारीरिकता के चलाए (सहारे या बल पर) चलते हुए असफलता के शिकार होते हैं, उतना ही अधिक इस सच्चाई की समझ की ओर बढ़ते हैं कि हमारे लिए यह जानना–मानना बहुत जरूरी है कि हमारा पुराना मनुष्यत्व मसीह के साथ क्रूसित हो चुका है (विजयी आत्मिक जीवन की कुंजी)। पवित्र वचन में शारीरिकता पर दैनिक विजय का एकमात्र समाधान रोमियों की पत्री के छठवें अध्याय के छठवें पद में दिया गया है – हमारा पुराना मनुष्यत्व **मसीह के साथ** क्रूसित किया गया (गला0 2:20)।

"सब बातों का अन्त निकट है। अतः समझदार होकर प्रार्थना के लिए तत्पर रहो। सब से बढ़कर, एक दूसरे के प्रति प्रेम में सरगर्म रहो, क्योंकि प्रेम असंख्य पापों को ढांप देता है। बिना कुड़कुड़ाए एक दूसरे की पहुनाई करो। जबकि प्रत्येक को एक विशेष वरदान मिला है तो उसे परमेश्वर के विविध अनुग्रह के उत्तम भंडारियों के समान एक दूसरे की सेवा में लगाओ। जो भी उपदेश दे, वह ऐसे दे मानो परमेश्वर ही का वचन देता है। जो सेवा करे, उस सामर्थ्य से करे जो परमेश्वर देता है, जिस से सब बातों में यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर की महिमा हो। महिमा और अधिकार युगानुयुग उसी का है। आमीन" (प0पत0 4:7–11)। यहां फिर पवित्र आत्मा के चलाए जीवन व्यतीत करने तथा ख्रीष्तीय सद्गुणों के प्रकटन का प्रोत्साहन पाया

जाता है। हमें यह सामर्थ्य एवं सुइच्छा प्रदान की गई है कि प्रभु यीशु के भावी पुनरागमन तथा उसके साथ होने की अद्भुत आशा में जीवन बिताएं। जो विश्वास नहीं करते उनके लिए तब बहुत देर हो चुकी होगी। इसीलिए हमारे समस्त कार्य, व्यवहार एवं प्रार्थनाओं का लक्ष्य 'खोए हुओं' को प्रभु के समीप लाना होना चाहिए। केवल आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले लोग ही, अपने स्वार्थ के प्रति स्वयं को मृतक मानकर, दूसरों की सेवा सहायता करते हुए, सच्चे ख्रीष्तीय प्रेम का प्रदर्शन कर सकते हैं (दू0कुरि0 4:10–12)। आत्मा के अधीन जीने पर, परमेश्वर का प्रेम "असंख्य पापों को ढक देता" है। ऐसा जन दूसरों के पापीपन के प्रति वही समझदारीपूर्ण दृष्टि रखता है जैसा कि नरक–पथ पर अग्रसर "खोए हुए लोगों के प्रति" (नीति0 10:12)।

हममें से प्रत्येक विश्वासी को परमेश्वर के अनुग्रह से एक खास योग्यता (वरदान) प्रदान की गई है जिसके द्वारा प्रभु परमेश्वर हमसे मसीह की देह (अर्थात् कलीसिया) में सेवा ले सकता है। आत्मा के अधीन आचरण करने वाला विश्वासी "मसीह की देह" (कलीसिया) में अपनी स्थिति एवं अपने वरदान के अनुसार कार्य करता है। जब हम आत्मा की अधीनता में जीवन व्यतीत करते हैं और परमेश्वर की इच्छानुसार कार्य करते हैं, तब प्रभु परमेश्वर की महिमा होती है।

"हे प्रियों, यह दुख–रूपी अग्नि–परीक्षा जो तुम्हारे मध्य इसलिए आई कि तुम्हारी परख हो – इसे यह समझकर अचम्भा न करना कि कोई अनोखी घटना तुम पर घट रही है। परन्तु जैसे जैसे तुम मसीह के दुखों में सहभागी होते रहते हो, आनन्दित रहो, जिससे कि उसकी महिमा के प्रकट होते समय भी तुम आनन्द से उल्लसित हो जाओ। यदि मसीह के नाम के कारण तुम्हारी निन्दा की जाती है तो तुम धन्य हो, क्योंकि महिमा का आत्मा, जो परमेश्वर का आत्मा है, तुम में वास करता है। किसी भी प्रकार तुम में से कोई हत्यारा, चोर, दुष्टता का कार्य करने वाला, तथा दूसरे के कार्यों में हस्तक्षेप करके तंग करने वाला होकर दुख न उठाए। पर यदि कोई मसीही होने के कारण दुख उठाता है, तो वह लज्जित न हो, वरन् अपने इस नाम के लिए परमेश्वर की महिमा करे। क्योंकि समय आ गया है कि परमेश्वर के घराने से ही न्याय का आरम्भ हो। अतः यदि न्याय का आरम्भ हम से ही होगा तो उनका क्या परिणाम होगा जिन्होंने परमेश्वर के सुसमाचार का पालन नहीं किया? यदि धर्मी व्यक्ति कठिनाई से ही उद्धार प्राप्त करेगा, तो ईश्वर–रहित और पापी मनुष्य की क्या दशा होगी? इसलिए वे भी जो परमेश्वर के इच्छानुसार दुख उठाते हैं, उचित कार्य करते हुए अपने अपने प्राण को विश्वासयोग्य सृष्टिकर्ता के हाथों में सौंप दें" (प0पत0

4:12—19)। मसीही विश्वासी होने के कारण जब हमारा विरोध या उत्पीड़न किया जाता है, तो इससे हमें आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। ऐसा होना कोई असामान्य बात नहीं है। इस दुनिया के लोगों ने हमारे उद्धारकर्ता प्रभु यीशु के साथ भी तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया। अतः उसके अनुयायियों के साथ ऐसा होना कोई आश्चर्य की बात नहीं (यूह0 17:14)। प्रभु यीशु एक दिन पुनः वापिस आने वाला है। तब वह अपने विश्वासियों को अपने पास एकत्रित करेगा। उस वक्त उसके विश्वासियों का आनन्द इतना महान होगा कि वर्तमान काल के ये अस्थायी दुःख, उत्पीड़न एवं समस्याएं नगण्य साबित होंगी (रोमि0 8:18)। पतरस यह कहता है कि यदि कोई **ख्रीष्त के नाम** के कारण अथवा **मसीही** होने के कारण निन्दा एवं उत्पीड़न सह रहा है तो (सम्भवतः) ऐसे व्यक्ति का जीवन प्रभु की एक सच्ची साक्षी है। इसके विपरीत शारीरिकता में जीने वाले व्यक्ति का जीवन आचरण अविश्वासियों से भिन्न नहीं दिखता।

6

"इसलिए मैं जो तुम्हारा सह–प्राचीन हूं, मसीह के दुखों का साक्षी हूं और उस प्रकट होने वाली महिमा का भी सहभागी हूं, मैं तुम्हारे मध्य प्राचीनों को प्रोत्साहित करता हूं, कि अपने मध्य स्थित परमेश्वर के झुंड की रखवाली करो – यह किसी दबाव से नहीं, पर स्वेच्छा से तथा परमेश्वर की इच्छा के अनुसार, तुच्छ कमाई के लिए नहीं वरन् उत्साहपूर्वक कार्य करो। जो लोग तुम्हें सौंपे गए हैं, उन पर प्रभुता न जताओ, परन्तु अपने झुण्ड के लिए आदर्श बनो। जब प्रधान रखवाला प्रकट होगा तो तुम अजर महिमा का मुकुट पाओगे" (प0पत0 5:1–4)। यहां कलीसिया की अगुवाई करने वालों के लिए निर्देश दिए गये हैं। पतरस ने कलीसियाई अगुवों को परमेश्वर–प्रदत्त झुंड की देखभाल करते रहने के लिए प्रोत्साहित किया है। शारीरिकता के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले अगुवे मान–सम्मान, पद–पदवी, पैसे–रुपये अथवा अधिकार–सत्ता पाने के लिए गलत नीयत–भावना से अगुवाई करते हैं। हमें यह भी याद रखना है कि शारीरिकता के अधीन चलने पर अगुवों के जीवन से ख्रीष्त का प्रेम एवं ख्रीष्त का जीवन–स्वभाव प्रकट नहीं हो सकता। इसके विपरीत आत्मा के अधीन चलने वाला अगुवा ईश्वरीय–इच्छा के अधीन सच्चे मन से तथा परमेश्वर की इच्छानुसार अगुवाई करेगा।

मसीही विश्वासियों को दासवत् नेतृत्व प्रदान करना है — अर्थात् कथनी व करनी में अन्तर न हो (मर0 10:42—45)।

"इसी प्रकार हे नवयुवकों, तुम भी प्राचीनों के अधीन रहो और तुम सब के सब एक दूसरे के प्रति विनम्रता धारण करो, क्योंकि परमेश्वर अभिमानियों का तो विरोध करता है, पर दीनों पर अनुग्रह करता है। इसलिए परमेश्वर के सामर्थी हाथ के नीचे दीन बनो, जिससे कि वह तुम्हें उचित समय पर उन्नत करे। अपनी समस्त चिन्ता उसी पर डाल दो, क्योंकि वह तुम्हारी चिन्ता करता है" (प0पत0 5:5—7)। शारीरिक जन सिर्फ अपनी चिन्ता करता है, सिर्फ अपनी इच्छा पूरी करना चाहता है और अक्सर अपने को ही सबसे महत्वपूर्ण मानता है। हम एक दूसरे के अधीन रहना नापसन्द करते हैं, क्योंकि इससे दूसरा व्यक्ति हमसे ज्यादा बुद्धिमान, ज्ञानवान् और समझदार दिखाई देगा। लेकिन पतरस यह कहता है कि हमें विनम्रता धारण करना चाहिए और लोगों के साथ हमारा समस्त आचार—व्यवहार दीनतापूर्ण होना चाहिए। पतरस यह भी स्पष्ट कर देता है कि प्रभु परमेश्वर मनुष्य के शारीरिक घमंड का विरोधी है, परन्तु दीन मन वालों पर अनुग्रह करता है। अहंकार एवं स्वच्छन्दता को बढ़ावा देने वाले हमारे अहंकारपूर्ण तौर—तरीकों को प्रभु परमेश्वर आशीषित नहीं करता। इसके विपरीत दीन जन को अनुग्रह (अनर्जित दया—दृष्टि) प्रदान करता है। जब हम **आत्मा** द्वारा दी गई दीनता में प्रभु परमेश्वर की सर्वोच्च अधिकार—सत्ता पर आशा—भरोसा

रखते हुए जीवन बिताते हैं; तब हम अपनी समस्त चिंताओं को प्रभु पर ही छोड़ (डाल) देते हैं और उसी पर आशा; भरोसा एवं विश्वास–विश्राम करते हैं ताकि अपने समय में और अपनी इच्छानुसार हमारे जीवन में **वह** अपनी कार्य–योजना पूरी करे।

"संयमी और सचेत रहो। तुम्हारा शत्रु शैतान गर्जने वाले सिंह की भांति इस ताक में रहता है कि किसको फाड़ खाए। विश्वास में दृढ़ रहकर उसका विरोध करो, और यह जान लो कि तुम्हारे भाई जो संसार में हैं इसी प्रकार की यातना सह रहे हैं" (प0पत0 5:8–9)। प्रभु का दास पतरस हमें आगाह करता है कि शैतान ऐसे लोगों की ताक में लगा रहता है जिनके छेद्य जीवन में आसानी से प्रवेश पाकर उन्हें बर्बाद कर (फाड़ खा) सकता है। शैतान हमारे जीवन में जबरन बर्बादी नहीं ला सकता। वह बलपूर्वक हमारा हाथ पकड़कर जबरदस्ती पाप नहीं करा सकता। वह तो हमें प्रलोभन, दोष एवं धोखे के जाल में फंसाता है। हमारे मन में सत्य के प्रति संदेह पैदा करना उसकी एक खास (शैतानी) युक्ति है। शारीरिकता का जीवन जीने पर शैतान की युक्तियों के आसान शिकार हो जाने की संभावना बढ़ जाती है। क्योंकि शारीरिक जन के लिए शैतानी झूठ को सच मानना आसान हो जाता है और ऐसा जन परमेश्वर के वचन रूपी सत्य पर स्थिर नहीं रहता। बहरहाल, प्रभु का सेवक पतरस बड़ी स्पष्टता से कहता है

कि (क्रूस पर हमारे वास्ते मसीह द्वारा पूरा किए गये उद्धार–कार्य तथा उसके द्वारा प्राप्त आत्मिक आशिषों पर) "विश्वास में सुदृढ़" रहकर ही शैतान का सामना (विरोध) करना सम्भव है।

"तुम्हारे थोड़ी देर यातना सहने के पश्चात् सारे अनुग्रह का परमेश्वर जिसने तुम्हें मसीह में अपनी अनन्त महिमा के लिए बुलाया – वह स्वयं ही तुम्हें सिद्ध, दृढ़, बलवन्त और स्थिर करेगा। उसी का अधिकार युगानुयुग रहे। आमीन" (प0पत0 5:10–11)। आध्यात्मिक विकास की प्रक्रिया (जीवन के संघर्ष, परीक्षाएं, परेशानियां तथा शारीरिकता के बजाय आत्मा के चलाए चलना सीखना इत्यादि) आजीवन चलने वाली आत्मिक प्रक्रिया है। इसके द्वारा प्रभु परमेश्वर हमें दृढ़ता एवं सिद्धता में बढ़ाता है – ख्रीष्त–स्वभाव में विकसित होते रहने की प्रक्रिया। दसवें पद में पतरस के शब्दों पर ध्यान दें – यह आत्मिक विकास का कार्य परमेश्वर कर (की ओर से हो) रहा है। सच्ची आत्मिक उन्नति हमारा कार्य–दायित्व (कर्म–प्रयास) नहीं है। कहने का मतलब, हम अपने आप को आत्मिक नहीं बना सकते। यह प्रभु का कार्य–दायित्व है – हमें तो मसीह यीशु द्वारा पूर्ण किए गये उद्धार–कार्य पर विश्वास–विश्राम के आधार पर जीवन व्यतीत करना है।

"मैंने सिलवानुस के द्वारा, जिसे मैं विश्वासयोग्य भाई मानता हूं, तुम्हें प्रोत्साहित करते और इस बात की साक्षी देते हुए संक्षेप में लिखा है कि यही परमेश्वर का सच्चा अनुग्रह है। इसी में दृढ़ बने रहो। वह जो बाबुल में है और तुम्हारे साथ चुनी हुई है, तुम्हें नमस्कार कहती है, और उसके साथ मेरा पुत्र मरकुस भी। प्रेम के चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार कहो। तुम सब को जो मसीह में हो, शांति मिले" (प0पत0 5:12–14)। हमारे जीवन में जो कुछ होता है, इस सब के जरिये प्रभु परमेश्वर हमारे जीवन में अपने आत्मा द्वारा अपना कार्य करते हुए हमें मसीह के स्वभाव में ढाल रहा है। इस प्रक्रिया में जब–तब शारीरिकता में जीवन बिताते हुए, हम कठिन परिस्थितियों में परेशान रहते हैं। लेकिन जिन्दगी का मतलब सिर्फ हमारी बाह्य, इहलौकिक परिस्थितियां ही नहीं हैं। बल्कि हम विश्वासियों के लिए जीवन का मतलब है – हमारे जीवन के लिए परमेश्वर का कार्योद्‌देश्य तथा हमें उसके एकलौते पुत्र के स्वभाव में ढालने की ईश्वरीय उद्‌देश्य–योजना। अतः संत पतरस अपनी इस पत्री के अन्त में यह कहता है : "यह परमेश्वर का सच्चा अनुग्रह है। इसी में दृढ़ बने रहो"।

7

दूसरा पतरस

यह सुस्पष्ट नहीं है कि **पहला पतरस** लिखे जाने के कितने समय बाद **दूसरा पतरस** लिखा गया। परन्तु अधिकतर लोगों का विचार है कि इन दोनों पुस्तकों के लिखे जाने का समयान्तर बहुत कम है। ऐसा माना जाता है कि पतरस द्वारा यह दूसरी पत्री लिखे जाने के समय पौलुस का या तो देहान्त हो चुका था, या फिर शहीद होने के बहुत ही निकट था, क्योंकि अपनी दूसरी पत्री में पतरस यह इशारा करता है कि तत्कालीन मंडलियों में पौलुस के अभिलेख प्रचलित थे (दू0पत0 3:15–16)।

पतरस की इस दूसरी पत्री में भविष्य सम्बन्धी बातों एवं विश्वासियों की भावी आशा के बारे में लिखा गया है और साथ ही साथ यह भी दर्शाया गया है कि हमें इस पथ पर कैसे अग्रसर रहना है। इस पत्री का एक प्रमुख शब्द "ज्ञान" है जो लगभग तेरह बार प्रयोग हुआ है। यहां यह भी नहीं भूलना चाहिए कि इस पत्री के लिखते समय पतरस यह समझ रहा था कि शीघ्र ही वह भी अपने मसीही विश्वास के लिए शहीद होने वाला है; इसीलिए उसने उन झूठी शिक्षाओं एवं भ्रामक लोगों के प्रति विश्वासियों को चेतावनी दिया जो मसीहियत पर धावा बोलने वाले थे। अतः पतरस बड़े सरल ढंग से हमें मसीह में उपलब्ध आध्यात्मिक

आशिषों की याद दिलाता है और साथ ही साथ परमेश्वर के अनुग्रह में विकसित होने के महत्व को दर्शाता है। ऐसे सुदृढ़ आत्मिक विकास के द्वारा ही हमारे जीवन (एवं मंडली) की बुनियाद को हिलाने में लगी भ्रामक शिक्षाओं एवं बुराईयों का सामना करना सम्भव होगा।

"शमौन पतरस की ओर से, जो यीशु मसीह का दास और प्रेरित है, उन लोगों के नाम जिनको हमारे परमेश्वर, उद्धारकर्ता यीशु मसीह की धार्मिकता द्वारा हमारे ही समान बहुमूल्य विश्वास प्राप्त हुआ : परमेश्वर और हमारे प्रभु यीशु के पूर्णज्ञान के द्वारा तुम में अनुग्रह और शांति बहुतायत से बढ़ती जाए" (दू0पत0 1:1–2)। यहां संत पतरस ने विश्वासियों के बारे में यह लिखा है कि उन्हें "हमारे परमेश्वर... की धार्मिकता द्वारा विश्वास प्राप्त हुआ है"। मसीह द्वारा पूर्ण किए गये उद्धार–कार्य के कारण, पिता परमेश्वर ने अपनी धार्मिकता के अनुसार, उन सब के लिए उद्धार का द्वार खोल दिया है जो विश्वास करते हैं। "हमारे ही समान बहुमूल्य विश्वास" प्रत्येक विश्वासी जन के विश्वास–विषय (विश्वास–उद्देश्य, विश्वास के पात्र) की ओर इशारा करता है, न कि विश्वास के परिणाम की ओर। पतरस तथा अन्य प्रेरितों का विश्वास भी वही विश्वास था जो आजकल के मसीही विश्वासियों का है; अर्थात् मसीह द्वारा कलवरी क्रूस पर पूरा किए गये उद्धार–कार्य पर आशा–भरोसा एवं निर्भरता।

संत पतरस यहां लिखता है कि "परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह के पूर्णज्ञान द्वारा तुम में अनुग्रह और शांति बहुतायत से बढ़ती जाए"। परमेश्वर के अनुग्रह एवं शांति का अनुभव उसी अनुपात में होता है जिस अनुपात में परमेश्वर एवं प्रभु यीशु मसीह को तथा उसके द्वारा हमारे वास्ते क्रूस पर सम्पन्न उद्धार–कार्य की ज्ञान–समझ रखते हैं। हमारे सारे भय, चिन्ता एवं समस्याओं का एकमात्र स्थायी समाधान मसीह द्वारा सम्पन्न उद्धार–कार्य में उपलब्ध है (परमेश्वर की दृष्टि में मसीह मेरे बदले क्रूस पर मरा, मेरा पुराना मनुष्यत्व मसीह के साथ सह–क्रूसित हुआ, आत्मा के नियंत्रण में जीना है)। इन सच्चाईयों एवं परमेश्वर–प्रदत्त समाधान की अनदेखी चिन्ता, व्याकुलता, अशांति एवं भय को बढ़ावा देती है। शारीरिकता के सहारे जीने पर हम अन्य चीजों में सुख, शांति व इत्मिनान खोजने लगते हैं (पैसा, धन–दौलत, शराब, सेक्स इत्यादि में)। इनमें से कुछेक चीजें थोड़े समय तक सुख–शांति देती प्रतीत होती हैं; लेकिन अन्ततः इनमें निराशा ही मिलती है (इब्रा0 11:25)।

"उसकी ईश्वरीय सामर्थ्य ने उसी के पूर्ण ज्ञान के द्वारा जिसने हमें अपनी महिमा और सद्‌भावना के अनुसार बुलाया है, वह सब कुछ जो जीवन और भक्ति से सम्बन्ध रखता है, हमें प्रदान किया है। क्योंकि उसने इन्हीं के कारण हमें अपनी बहुमूल्य और उत्तम प्रतिज्ञाएं दी हैं जिससे कि तुम उनके द्वारा उस भ्रष्ट आचरण से जो वासना के कारण संसार में है, छूटकर ईश्वरीय स्वभाव के

सहभागी हो जाओ" (दू0पत0 1:3–4)। ईश्वरपरायण जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक सब कुछ हमें प्रभु परमेश्वर द्वारा प्रदान कर दिया गया है। जैसे–जैसे हम उसके द्वारा मसीह में पूर्ण किए गये ईश्वरीय उद्धार–कार्य के ज्ञान–समझ में बढ़ते हैं, वैसे–वैसे उसके अनुग्रह एवं शांतिप्रद कार्य का अपने जीवन में अनुभव करते हैं। तब हमारी बाह्य परिस्थितियों की असहजता के बावजूद हमारा अन्तर्मन शांति एवं संयम में रहता है। इसके विपरीत, प्रभु परमेश्वर तथा उसकी ईश्वरीय सामर्थ्य द्वारा किए गये उपाय के ज्ञान के अभाव में हम उसके सच्चे अनुग्रह को नहीं समझते। तब हम अपनी बाह्य परिस्थितियों पर ध्यान लगाने के कारण अस्थिरता, व्याकुलता व अशांति के शिकार होते हैं।

अब चौथे पद की सुस्पष्ट बात पर ध्यान दें। इहलौकिक भ्रष्टता से मुक्त होने का एक ही मार्ग है – ख्रीष्त के स्वभाव में ढलते जाना। परमेश्वर–प्रदत्त "बहुमूल्य और उत्तम प्रतिज्ञाओं के ज्ञान एवं उन पर विश्वास के द्वारा हम 'ईश्वरीय स्वभाव' के सहभागी होते हैं; और यह प्रतिज्ञाएं सिर्फ मसीह यीशु में ही प्राप्त हैं" (दू0कुरि0 3:18)। मनुष्य को "ईश्वरीय स्वभाव" में सहभागी बनाने योग्य परमेश्वर–प्रदत्त एकमात्र वायदा एवं उपाय सिर्फ यीशु मसीह में ही उपलब्ध है। संसारिक लालसाओं से छुटकारा पाने तथा मसीह के (ईश्वरीय) स्वभाव में सहभागी होने के एकमात्र उपाय एवं आशा, क्रूस पर मसीह द्वारा पूरा किए गये उद्धार–कार्य पर विश्वास–विश्राम करना तथा उसके

साथ हमारी आत्मिक एकता व पहचान रूपी सच्चाई को मानना–अपनाना है। उद्धार–प्राप्ति के समय, परमेश्वर की दृष्टि में, हम मसीह में स्थापित कर दिए गये। इसका आत्मिक भावार्थ यह है कि हम (परमेश्वर की दृष्टि में) मसीह के साथ क्रूसित हुए, पुनः जीवित किए गये और अब (मसीह में/उसके साथ) पिता के दाहिनी ओर विराजमान हैं।

"इसी कारण से प्रयत्नशील होकर, अपने विश्वास में सद्‌गुण तथा सद्‌गुण में ज्ञान और ज्ञान में संयम, संयम में धीरज, और धीरज में भक्ति, तथा अपनी भक्ति में भ्रातृ–स्नेह, और भ्रातृ–स्नेह में प्रेम बढ़ाते जाओ। क्योंकि यदि ये गुण तुम में बने रहें तथा बढ़ते जाएं तो हमारे प्रभु यीशु मसीह के पूर्ण ज्ञान में ये तुम्हें न तो अयोग्य और न निष्फल होने देंगे। क्योंकि जिसमें ये गुण नहीं वह अंधा है, अदूरदर्शी है। वह अपने पहिले के पापों से धुलकर शुद्ध होने को भूल बैठा है। अतः हे भाइयों, अपने बुलाए जाने और चुने जाने की निश्चयता का और भी अधिक प्रयत्न करते जाओ, क्योंकि इन बातों के प्रयत्न में जब तक रहोगे, तुम कभी ठोकर न खाओगे, और इसी प्रकार हमारे उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह के अनन्त राज्य में प्रवेश के लिए तुम्हारा बड़ा स्वागत होगा" (दू0पत0 1:5–11)। यहां 'विश्वास के सहारे जीवन व्यतीत करने के फल' का वर्णन किया गया है। संसारिक लालसाओं से बचाव एवं ईश्वरीय स्वभाव में विकास का अनुभव करने वाले विश्वासियों में ये गुण–विशेषताएं दिखाई देने लगती हैं। परमेश्वर के ज्ञान में

बढ़ते रहने के साथ–साथ उसके अनुग्रह, शांति, जीवन एवं भक्ति से सम्बंधित आत्मिक आशिषें तथा ईश्वरीय स्वभाव को अपनाने के अलावा पतरस ने विश्वासियों को निम्नलिखित बातों पर भी गम्भीरतापूर्वक विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया है। जैसे–जैसे ख्रीष्त के स्वभाव में हम ढलते जाते हैं, वैसे–वैसे हमारे विश्वास में यह बातें भी जुड़ती जाती हैं :–

सदगुण : अर्थात् उत्कृष्टता, पवित्रता, साहस या पराक्रम।

ज्ञान : मसीही जीवन के लिए हमें यह जानना जरूरी है कि 'मसीह में' हम क्या हैं और मसीह ने हमारे लिये क्या किया है। ज्ञान के साथ ही इन बातों को मानते–अपनाते हुए ही विश्वासपूर्वक आत्मिक जीवन व्यतीत किया जा सकता है।

संयम : यह गुण पवित्र आत्मा के फलों में से एक है। जैसे–जैसे मसीह के स्वभाव में हमारा विकास होता है, उसी परिमाण में हममें संयम बढ़ता है।

धीरज : अर्थात् सहर्ष सहनशीलता, स्थिरता एवं धैर्यपूर्ण सहनशीलता। परमेश्वर के ज्ञान और अनुग्रह में उन्नति के साथ–साथ धैर्यपूर्ण सहनशीलता भी विकसित होती है। यह भी **आत्मा** के फलों में से एक है (कुलु0 1:11)।

भक्ति : मसीही मायने में ईश्वर–भक्ति का मतलब मानव–प्रयास द्वारा ईश्वर की नकल करना नहीं है; बल्कि मनुष्य के जीवन में ईश्वरीय अनुग्रह–कार्य द्वारा

ख्रीष्त–स्वभाव का निर्माण है। इस ईश्वरीय आध्यात्मिक कार्य में परमेश्वर कोई हड़बड़ी नहीं करता और न ही शार्टकट तरीके अपनाता है। प्रभु परमेश्वर आदिकाल से अनन्त काल तक सक्रिय है। जब हम इस सच्चाई को समझने व मानने लगते हैं, तब धैर्य व हर्ष के साथ आजीवन चलने वाली इस ईश्वर–नियंत्रित ईश्वर–भक्ति–विकास प्रक्रिया को सहने की क्षमता पाते हैं।

भ्रातृ–स्नेह : भाई–चारे की प्रीति हमें दूसरे किसी व्यक्ति की आत्मिक उन्नति को धैर्यपूर्वक सहन करने की क्षमता प्रदान करती है। यदि हम अपने विश्वासी भाई–बहनों के प्रति सच्चा प्रेम रखते हैं तो उनकी सफलता चाहेंगे। तब हम दूसरे विश्वासी भाई–बहनों के प्रति प्रतियोगिता और ईर्ष्या की भावना से ग्रसित नहीं रहेंगे (फिलि0 2:3–4)।

प्रेम : सच्चा बाइबॅलीय प्रेम कोई महसूसियत नहीं है, और न ही स्वार्थ–केन्द्रित। यह प्रेम परमेश्वर की ओर से आता है (अर्थात् यह परमेश्वर–प्रदत्त प्रेम है)। यह (ईश्वरीय) प्रेम दूसरों से बदले में कुछ पाने की आकांक्षा से प्रेम नहीं करता (प0कुरि0 13:4–7;12:15)।

पतरस यह कहता है कि जिस मसीही विश्वासी में उपर्युक्त गुण प्रचुरता से विकसित होते रहते हैं, उसके जीवन में प्रभु का ज्ञान न तो निष्क्रिय रहता है और न ही निष्फल। कहने का मतलब यह है कि परमेश्वर को जानने; मानने एवं उस पर विश्वास करने वालों का इन गुणों में नहीं बढ़ना, निकम्में एवं निष्क्रिय विश्वास को दर्शाता है।

किसी नई गाड़ी को खरीदने के बाद उसे धूल की गन्दगी या दूसरे वाहनों से ठोकर वगैरह से खरोंच लग जाने के भय से इस्तेमाल नहीं करना, बगैर गाड़ी के होने जैसा है। हमारे विश्वास एवं ईश्वर–ज्ञान के बारे में भी यही कहा जा सकता है। प्रभु यीशु मसीह में प्राप्त आध्यात्मिक आशिषों के द्वारा यदि हमारे जीवन में उपर्युक्त "गुण" विकसित नहीं होते तो हमारा ज्ञान व विश्वास निष्प्राण, निष्क्रिय एवं निरर्थक है (अर्थात् सच्चा नहीं है)। इस सम्बन्ध में पतरस आगे क्या कहता है? ऐसे व्यक्ति का विश्वास सिर्फ निकम्मा ही नहीं है, बल्कि ऐसा व्यक्ति "अन्धा" और "अदूरदर्शी" है तथा "अपने पहिले के पापों से धुल कर शुद्ध होने को भूल बैठा" है।

यदि हमारे जीवन में आत्मिक विकास एवं इन गुणों का प्रकटन नहीं हो रहा है, तो हम "मसीह में" प्राप्त उद्धार की सच्चाई व सम्पूर्णता को ठीक से नहीं समझते। ऐसे लोग उद्धार तथा मसीह में उपलब्ध आशिषों के प्रति संकीर्ण और स्वार्थी दृष्टिकोण रखते हैं। **तीतुस** ने अपनी पत्री के दूसरे अध्याय के ग्यारहवें–बारहवें पद में यह लिखा है कि परमेश्वर का अनुग्रह "हमें यह सिखाता है कि हम अभक्ति और संसारिक अभिलाषाओं का इनकार करके" इस युग में पवित्र जीवन व्यतीत करें। जब हम में ऐसे सद्‌गुणों के अनुसार जीवन बिताने की आत्मिक प्रेरणा नहीं पाई जाती, तब हम में इस बात की सुस्पष्ट समझ नहीं होती कि परमेश्वर के अनुग्रह द्वारा हम किस लिए उद्धार पाए हैं और किसकी दासता से उद्धार पाए हैं। अतः पतरस ने

मसीही विश्वासियों को सद्‌गुण, ज्ञान, संयम, धैर्य, भक्ति, भ्रातृ–स्नेह और प्रेम में बढ़ते रहने के लिए प्रोत्साहित किया। विश्वासी के जीवन में जब ये गुण विकसित व प्रकट होते हैं, तब यह सुस्पष्ट होता है कि वह मसीह के स्वभाव में बढ़ (ढल) रहा है। अर्थात् मसीही उद्धार में जिस क्रांतिकारी जीवन–परिवर्तन का उपाय किया गया है, वह सार्थक व साकार हो रहा है।

"यद्यपि तुम इन बातों को पहिले से ही जानते हो तथा उस सत्य में जो तुम्हारा है स्थिर भी किए गये हो, तथापि मैं तुम्हें इनका स्मरण दिलाने के लिए सदैव तैयार रहूंगा। मैं जब तक इस डेरे में हूं, यह उचित समझता हूं कि इन बातों का स्मरण दिलाकर तुम्हें उत्साहित करता रहूं। क्योंकि यह जानता हूं कि मेरे डेरे के गिराए जाने का समय अति निकट है, जैसा कि हमारे प्रभु यीशु मसीह ने भी मुझ पर प्रकट कर दिया है। मैं ऐसा प्रयत्न भी करूंगा कि मेरे जाने के पश्चात् तुम किसी भी समय इन बातों का स्मरण कर सको" (दू0पत0 1:12–15)। इन सच्चाईयों के महत्व को भली–भांति पहचानते हुए प्रभु का दास पतरस अपने पाठकों को निरन्तर इनकी याद दिलाते रहने का आकांक्षी था। खासकर इस पत्री के लिखते समय, जब कि उसे अपनी मृत्यु की निकटता का आभास होने लगा था। आज भी ऐसा ही है। यद्यपि हम इन बाइबॅलीय सच्चाईयों को पहले से सुनते आ रहे हैं और इनकी सत्यता से परिचित हैं, तथापि यह आवश्यक है कि हमें इनकी बारम्बार याद दिलायी जाय। भटक कर पुनः शारीरिकता के पथ पर

चलने लगना बड़ा आसान है; और ऐसा होने पर हमारी दृष्टि परमेश्वर के वचन की गहरी सच्चाईयों से दूर हो जाती है (इफि0 4:17–19)।

"जब हमने तुम्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के सामर्थ्य और आगमन का समाचार दिया, तो हमने चतुराई से गढ़ी हुई कहानियों का सहारा नहीं लिया, क्योंकि हम उसके माहात्म्य के आखों देखे गवाह थे। जब उसने परमेश्वर पिता से आदर और महिमा प्राप्त की, तो उसके लिए प्रतापी महिमा की ऐसी वाणी हुईः 'यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिस से मैं अति प्रसन्न हूं' – और जब हम उसके साथ पवित्र पर्वत पर थे तो स्वयं हमने स्वर्ग से यही वाणी सुनी। अतः नबियों का जो वचन हमारे पास है, वह और भी अधिक प्रमाणित हुआ। इस पर ध्यान देकर तुम अच्छा करोगे मानो कि यह अंधेरे में चमकता हुआ एक दीपक है, जो उस समय तक चमकता है जब तक पौ न फटे और तुम्हारे हृदय में भोर का तारा उदय न हो। पर पहिले यह जान लो कि पवित्रशास्त्र की कोई भी भविष्यद्वाणी व्यक्तिगत विचारधारा का विषय नहीं है, क्योंकि कोई भी भविष्यद्वाणी मनुष्य की इच्छा से कभी नहीं हुई, परन्तु लोग पवित्र आत्मा की प्रेरणा द्वारा परमेश्वर की ओर से बोलते थे" (दू0पत0 1:16–21)। यहां पतरस ने पवित्रशास्त्र के महत्व को दर्शाया है। चूंकि परमेश्वर का पवित्र वचन पूर्णरूपेण सत्य है, इसलिए बारम्बार इसका स्मरण कराया जाना हमारी भलाई के लिए है। यद्यपि पवित्रशास्त्र में वर्णित अनेक अद्भुत बातों को हमने अपनी आंखों से नहीं

देखा है, लेकिन पतरस कहता है कि मसीह के माहात्म्य का वह साक्षात् साक्षी है। यह कोई मनगढ़न्त कहानी नहीं है, बल्कि वह तो मसीह के रूप–परिवर्तन के समय उस 'रूपान्तर पर्वत' पर उसके पास था और पिता परमेश्वर की स्वर्गिक वाणी को स्वयं सुना।

हम ऐसे जमाने में जी रहे हैं जबकि भ्रम–जाल एवं धोखेबाजी का बोलबाला है। यह निर्णय करना आसान नहीं है कि क्या विश्वास करें और क्या नहीं। इसीलिए इन ईश्वरीय सच्चाईयों के साक्षात् गवाहों द्वारा सदियों से जो सत्य सुसमाचार हमें स्मरण कराया जा रहा है उस पर विश्वास एवं आशा–भरोसा रखने में ही हमारी भलाई है। भविष्य में एक दिन ऐसा भी आने वाला है जबकि हम स्वर्ग में होंगे और तब सब कुछ सुस्पष्ट दिखाई देगा। बहरहाल, इस समय सब कुछ स्वयं नहीं देखने के बावजूद भी, हम यह जानते व मानते हैं कि सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र पवित्रआत्मा की प्रेरणा से रचा गया है और परमेश्वर की ओर से है। इसीलिए इस पवित्रवचन पर (साक्षात् देखी हुई घटनाओं की तरह) विश्वास किया जा सकता है (दू0तीमु0 3:16)।

8

"परन्तु उन लोगों के मध्य झूठे नबी भी उठ खड़े हुए जैसा कि तुम्हारे मध्य भी झूठे उपदेशक होंगे जो गुप्त रूप से घातक और विधर्मी शिक्षा का प्रचार करेंगे, यहां तक कि उस स्वामी को भी अस्वीकार करेंगे जिसने उन्हें मोल लिया है, और इस प्रकार वे शीघ्र ही अपने ऊपर विनाश ले आएंगे" (दू0पत0 2:1)। जैसे पुराना नियम काल में झूठे भविष्यवक्ता थे, वैसे ही पतरस के समय में भी झूठे शिक्षक थे, और आजकल भी ऐसे झूठे शिक्षक कलीसिया में घुसपैठ किए हैं। संत पतरस कहता है कि ऐसे विधर्मी शिक्षक "गुप्त रूप" से विनाशकारी शिक्षा लाते हैं और इनके सम्पर्क में रहने वाले बहुत से लोग इनके धोखे में फंसे रहते हैं। पतरस यह भी कहता है कि ऐसे झूठे शिक्षक "मसीह" को अस्वीकार करते हैं। अक्सर ऐसे लोग मसीह को सीधे व सुस्पष्ट तौर पर अस्वीकार करने के बजाय चालाकी के साथ 'मसीह द्वारा सम्पन्न उद्धार–कार्य की पर्याप्तता' को अस्वीकार करते हैं, जो कि हमारे पवित्रीकरण का आधार–स्रोत है। पतरस के अनुसार ऐसे झूठे शिक्षक अपने ऊपर शीघ्र विनाश आने को दावत देते हैं।

"बहुत से लोग तो उनकी विषय–वासना का अनुसरण करेंगे तथा उनके कारण सत्य के मार्ग की निन्दा होगी"

(दू0पत0 2:2)। बहुतेरे लोग ऐसे झूठे शिक्षकों की विनाशकारी शिक्षा के पीछे हो लेंगे। यहां यह भी स्मरण रखना सहायक होगा कि बहुत से झूठे शिक्षक इस बात के प्रति बेखबर रहते हैं कि उनके द्वारा दी जा रही शिक्षा झूठी (असत्य) है। ऐसे लोग शारीरिकता के धोखे में फंसे होते हैं और उनके द्वारा अन्य लोगों को भी शारीरिकता धोखे में डालती रहती है। आज भी यही दृश्य दिखाई देता है जबकि शारीरिकता के चलाए चलने वाले बहुत से मसीही व्यवस्था–बंधन या धर्म–कर्म रूपी मानवीय प्रयास द्वारा स्वयं को धर्मी दर्शाने में लगे रहते हैं। इस संदर्भ में यह नहीं भूलना चाहिए कि शारीरिकता 'घटने' के बजाय 'वृद्धि' को ज्यादा प्यार करती है; अर्थात् अपने आप को शून्य होते नहीं देख सकती। ऐसे लोग यह सुनना ज्यादा पसन्द करते हैं कि परमेश्वर के लिए बहुत कुछ करके ही खुशी हासिल की जा सकती है। परन्तु शारीरिकता का सर्वोत्तम उत्पाद अहं–केन्द्रित स्व–धार्मिकता (अर्थात् शारीरिकता) ही है।

इस प्रसंग में आर0एफ0 कपोन नामक प्रभु के एक दास की यह टिप्पणी स्मरणीय है : "अनुग्रह का सुसमाचार मजहबी धर्म–कर्म का अन्त है, अर्थात् मानव जाति द्वारा स्वयं को अच्छा साबित करने की परिश्रमपूर्ण दुकानदारी का समापन। मनुष्य का धर्म–कर्म स्वयं को भला साबित करने में ही लगा रहता है। अपने अनेक कामों द्वारा परमेश्वर के समक्ष मनुष्य स्वयं को ग्रहणयोग्य दर्शाना चाहता है। कभी–कभी तो ऐसा व्यवहार करता है जैसे कि प्रभु

परमेश्वर पर कोई मेहरबानी कर रहा हो... मनुष्य रचित धर्म–कर्म का अन्त है – पराजय। इसके अतीत का एकमात्र इतिहास असफलता है और इसके भावी इतिहास का नाम दिवालियापन है। न तो **अदन की वाटिका** में मानव रचित मजहब या धर्म–कर्म था और न ही **नये यरूशलेम** में इसका नामो निशान होगा। अब सच्चाई यह है कि मसीह यीशु हमारे बदले मर कर पुनः जीवित हो चुका है और हमें मानव रचित धर्म–कर्म को त्याग कर प्रभु मार्ग पर चलने के लिए आमंत्रित किया गया है। मसीह यीशु द्वारा सम्पन्न उद्धार–कार्य ने यह सुस्पष्ट कर दिया है कि पिता परमेश्वर की दृष्टि में हम (विश्वासीजन) छुड़ाए जा चुके हैं और उसके समीप प्रभु के लोग हैं। अब हमें प्रभु की कृपा–दृष्टि (पाप से उद्धार) पाने के लिए किसी भी प्रकार का कोई भी कर्म–प्रयास करना शेष (या जरूरी) नहीं है। हमें तो केवल मसीह द्वारा क्रूस पर हमारे बदले पूर्ण किए गये (परमेश्वर–कृत) उद्धार–कार्य पर आशा–भरोसा एवं **विश्वास** करने का निमंत्रण मिला है"।

"वे लोभ में आकर झूठी बातें बनाएंगे और तुमसे अनुचित लाभ उठाएंगे। दंड की आज्ञा तो उन पर पहले से ही हो चुकी है, और उनका विनाश सोया हुआ नहीं है। जबकि परमेश्वर ने उन स्वर्गदूतों को जिन्होंने पाप किया, न छोड़ा, पर उन्हें नरक में डाल दिया और न्याय के दिन के लिए अंधेरे कुंडों में बन्दी बना रखा है; तथा उस प्राचीन जगत को भी न छोड़ा, परन्तु भक्तिहीनों के संसार पर

जल–प्रलय भेजा, फिर भी धार्मिकता के प्रचारक नूह को अन्य सात व्यक्तियों सहित बचा लिया, और जबकि उसने सदोम और अमोरा के नगरों को विनाशकारी दंड देकर भस्म कर दिया कि वे आने वाले भक्तिहीनों के लिए एक उदाहरण ठहरें" (दू0पत0 2:3–6)। यहां पतरस यह बताता है कि प्रायः झूठे शिक्षक लोभ से कुप्रेरित होते हैं। ये झूठे शिक्षक सौदागरों की तरह अपने अनुयायियों को व्यापारिक वस्तु की भांति इस्तेमाल करके आर्थिक कमाई करते हैं, या फिर गिनती बढ़ाकर उनसे अपनी आमदनी बढ़ाते हैं। ऐसे लोगों को उसी प्रकार का न्याय–दंड मिलेगा जैसा कि पुराना नियम काल के झूठे भविष्यवक्ताओं को, पतित स्वर्गदूतों को, नूह के समय के लोगों को और सदोम–अमोरा के लोगों को (इत्यादि)। पतरस के शब्दों पर ध्यान दें : ऐसे लोगों का "विनाश सोया हुआ नहीं" है। जैसे आदिकाल से ही ऐसे भक्तिविहीन लोगों को ईश्वरीय दंड मिलता रहा है, वैसे ही आधुनिक झूठे शिक्षकों का भी दंडित होना सुनिश्चित है।

"जबकि उसने धर्मी लूत को भी छुड़ा लिया जो चरित्रहीन लोगों के वासनायुक्त आचरण से दुखी था – क्योंकि वह धर्मी पुरुष उनके मध्य रहते हुए जो कुछ देखता और सुनता था, उनके कुकर्मों के कारण अपनी सच्ची आत्मा में दिन प्रतिदिन व्यथित होता था – तो भक्तों को प्रभु परीक्षा में से निकालना और अधर्मियों को न्याय के दिन तक दंड के लिए रखना जानता है" (दू0पत0 2:7–9)। झूठे

शिक्षकों के दंडित होने की सुनिश्चयता को बताने के बाद, संत पतरस यह भी सुस्पष्ट करता है कि मसीही विश्वासियों की संरक्षा एवं उनका छुटकारा भी सुनिश्चित है। इस सम्बन्ध में (अब्राहम के भतीजे) लूत का उदाहरण देते हुए, पतरस कहता है कि सदोम–अमोरा में होने वाले "कुकर्मों" के कारण उसकी अन्तरात्मा प्रतिदिन दुखित व व्यथित हो रही थी। लूत दुष्टों के मध्य एक नागरिक था लेकिन वह उनकी दुष्टता में शामिल नहीं था। प्रभु परमेश्वर ने सदोम–अमोरा की दुष्टता से लूत की संरक्षा की और उन नगरों पर आए न्याय–दंड (विनाश) से भी उसे बचाया (उत्प0 14:15–16)। प्रभु परमेश्वर द्वारा किया गया न्याय सदैव सिद्ध (पूर्ण, सही, सच्चा) एवं निर्दोष होता है। केवल अधर्मी लोग ही न्याय–दंड के भागी होंगे। मसीह में विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए गये लोग 'महान श्वेत सिंहासन' के समक्ष अपने पाप के लिए न्याय एवं दंड के भागीदार नहीं होंगे।

"विशेषकर उनको जो अपनी देह को भ्रष्ट अभिलाषाओं में लिप्त रखते और प्रभुता को तुच्छ जानते हैं। ये उद्दण्ड स्वेच्छाचारी लोग महिमामय प्राणियों का भी अपमान करने से नहीं डरते, जबकि स्वर्गदूत, शक्ति व सामर्थ्य में श्रेष्ठ होते हुए भी, प्रभु के सम्मुख उन पर भला–बुरा कहकर दोष नहीं लगाते। ये लोग मूढ़ पशुओं और विवेकहीन प्राणियों के सदृश हैं जो पकड़े और मार डाले जाने के लिए उत्पन्न हुए हैं। ये जिन बातों को जानते

भी नहीं, उनकी निन्दा करते हैं। इनका विनाश भी पशुओं की भांति होगा। इन्हें बुराई का बदला बुरा ही मिलेगा। दिन के समय आमोद–प्रमोद करना इन्हें अच्छा लगता है। ये दाग और धब्बे हैं, तथा जब ये तुम्हारे साथ भोज में शामिल होते हैं तो छल करके रंगरेलियां मनाते हैं। इनकी आंखें व्यभिचार से भरी हैं, और ये पाप करने से नहीं रुकतीं। ये चंचल मन वालों को फुसला लेते हैं, इनके मन लालच करने के अभ्यस्त हैं, ये शापित सन्तान हैं। ये सीधे मार्ग को छोड़ कर भटक गए हैं : इन्होंने बओर के पुत्र बिलाम के मार्ग का अनुसरण किया है, जिसने अधर्म की मजदूरी को प्रिय जाना था। परन्तु उसे अपने अधर्म के काम के लिए ताड़ना मिली। एक अबोल गदही ने मनुष्य की बोली में बोलकर उस नबी के पागलपन को रोका" (दू0पत0 2:10–16)। यहां झूठे शिक्षकों के पहचान–चिन्ह (अवगुण) बताए गये हैं। इन भ्रामक शिक्षकों की एक खास पहचान इनका अहंकार (घमंडीपन) है। ऐसे झूठे शिक्षक अधिकार (अधीनता) का विरोध करते हैं और अपनी मनमर्जी ही पूरा करना चाहते हैं। ये इतने घमंडी होते हैं कि स्वर्गिक प्राणियों के बारे में भी बुरी बातें बोलते हैं। ऐसे झूठे शिक्षक प्रभु परमेश्वर की महानता के प्रति भय–भाव रखने के बजाय उसके महान कार्यों की अनदेखी करते हैं। ये भ्रामक लोग 'आत्माओं की दुनिया' को नहीं जानते–समझते; फिर भी शैतान एवं दुष्टात्माओं को डांटने, भगाने एवं निन्दित करने की ऐसी अकड़बाजी व अहंकार दिखाते हैं जैसे कि

सारे विश्व पर उन्हीं का नियंत्रण (राज) है। पतरस कहता है कि ये झूठे शिक्षक स्वर्गिक प्राणियों की निन्दा करने का दुःसाहस करते हैं; जिन चीजों को समझते भी नहीं, उनकी भी निन्दा करते हैं। बेशक, ऐसे लोग सत्य से दूर तथा अपने सारे बोल, विचार एवं कार्य–व्यवहार में भ्रष्ट होते हैं। ये झूठे प्रचारक सिर्फ अपने लिए, अपने सुख–विलास के लिए तथा अपनी स्वार्थ–सिद्धि के लिए जीते हैं।

"ये सूखे जल–स्रोत हैं। ये आंधी से उड़ाए जाने वाले निर्जल बादल हैं, जिनके लिए गहन अंधकार ठहराया गया है। ये अहंकार की व्यर्थ बातें कर के शारीरिक लालसाओं व लुचपन द्वारा उन लोगों को फंसा लेते हैं जो अभी–अभी भटके हुओं में से निकले हैं। ये उन्हें स्वतंत्र करने का वचन देते हैं जबकि स्वयं भ्रष्टता के दास हैं, क्योंकि मनुष्य जिस से हार जाता है, उसी का दास बन जाता है" (दू0पत0 2:17–19)। कभी–कभी दूर से देखने पर पानी के कुछ सोते ताजे और अच्छे दिखते हैं, लेकिन नजदीक से ध्यानपूर्वक देखने पर अनुपयोगी और बेकार साबित होते हैं। पतरस के अनुसार झूठे शिक्षक भी ऐसे ही होते हैं। अक्सर उनकी शिक्षा ऊपरी तौर पर अच्छी एवं सच्ची जैसी लगती है; परन्तु (पवित्र) आत्मा की अधीनता में इनकी बातों को सुनने पर उनकी निरर्थकता और निकम्मापन बेपर्द हो जाता है। स्मरण रहे कि आज हम अनुग्रह के युग में जी रहे हैं। ऐसे समय मसीही विश्वासियों को अपने धर्म–कर्म एवं क्रिया–कलाप के आधार पर पिता

परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य होने की व्यवस्था–केन्द्रित शिक्षा अच्छी और आत्मिक लगती है; लेकिन प्रेरितों के काम के पंद्रहवें अध्याय के दसवें पद के अनुसार ऐसी शिक्षा देना विश्वासियों पर असहनीय बोझ डालना है। इतना ही नहीं बल्कि ऐसी शिक्षा देना "परमेश्वर की परीक्षा" करने जैसा यानि उसके क्रोध को आमंत्रित करने जैसा है। ऐसी शिक्षा असहनीय जुए के बोझ जैसी होती है।

संत पतरस के अनुसार, ऐसे भ्रामक शिक्षक अपनी चिकनी–चुपड़ी बातों के द्वारा उन लोगों को आसानी से अपने जाल में फंसा लेते हैं जो सत्य की समझ में कमजोर होते हैं। दूसरों को आजाद करने का (नकली) दावा करते फिरते, ये झूठे शिक्षक, स्वयं ही अपनी शारीरिकता (की भ्रष्टता) के गुलाम होते हैं। ऐसे लोग, मसीह द्वारा क्रूस पर सम्पन्न उद्धार–कार्य को अपनी पवित्रता का एकमात्र उपाय (आधार) नहीं मानते।

"यदि ये हमारे उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह की पहिचान द्वारा संसार की अशुद्धताओं से बच निकलने के बाद फिर उन में फंस कर हार गए, तो उनके लिए पिछली दशा पहिले से भी बुरी हो गई है। उनके लिए उस पवित्र आज्ञा को जानकर जो उन्हें दी गई थी, फिर जाने की अपेक्षा, भला होता कि वे धार्मिकता के मार्ग को न जानते। उन पर यह कहावत ठीक बैठती है, 'कुत्ता अपने वमन के पास लौटता है,' और, 'नहलाई हुई सूअरनी कीचड़ में लोटने के लिए लौट जाती है'" (दू0पत0 2:20–22)। नया

जन्म पाने तथा परमेश्वर के उत्तम वचन का स्वाद चखने के बाद भी, बहुत से मसीही विश्वासी (अपने पिछले जीवन जैसी) शारीरिकता की जीवन–शैली में वापिस होकर पापमय जीवन जीने लगते हैं। अतः पतरस कहता है कि सत्य को जानने के बाद पुनः अधर्म की राह पर वापस जाने से बेहतर तो यही होता कि ऐसे लोग सच्ची धार्मिकता के ज्ञान व स्वाद को चखते ही नहीं (इब्रा0 6:4–6)। कहने का मतलब यह है कि जो मसीही विश्वासी शारीरिकता व पाप के अनुसार जीवन व्यतीत करता है वह दुःखदायी (अभागा या बुरा) जीवन जीता है; क्योंकि ऐसे व्यक्ति के अर्न्तमन में (पवित्रआत्मा–प्रदत्त) ईश्वरीय सत्य के प्रति कायलियत सदैव बनी रहती है। यहां पतरस यह भी इशारा करता है कि शारीरिकता बदलती नहीं। इसे सुधारा–संवारा नहीं जा सकता। जैसे कुत्ता "अपने वमन के पास" लौटता है और नहलाई हुई सूअरनी पुनः "कीचड़ में लोटने" के लिए लौटती है, उसी प्रकार शारीरिकता (पुराना आदम–स्वभाव) सदैव पाप व दुष्टता की ओर भागना चाहती है (नीति0 26:11)।

9

"हे प्रियों, अब यह दूसरा पत्र लिख कर मैं स्मरण दिलाते हुए तुम्हारे सच्चे मन को उभार रहा हूं कि तुम उन वचनों को जो पवित्र नबियों द्वारा पहिले से ही कहे गए थे, और उद्धारकर्ता प्रभु की उस आज्ञा को, जो तुम्हारे प्रेरितों द्वारा दी गई थी, स्मरण करो। सर्वप्रथम यह जान लो कि अन्तिम दिनों में ठट्ठा उड़ाने वाले ठट्ठा उड़ाते आएंगे जो अपनी दुर्वासनाओं का अनुसरण करेंगे, और कहेंगे, 'कहां गई उसके आगमन की प्रतिज्ञा? हमारे पूर्वज तो सो गए, फिर भी सृष्टि के आरम्भ से अब तक सब कुछ वैसा ही चला आ रहा है'" (दू0पत0 3:1–4)। यहां पतरस यहूदी पृष्ठभूमि के मसीही विश्वासियों को "अंतिम समय" सम्बन्धी पुराना नियम की भविष्यवाणियों की याद दिलाता है जिनमें उन "ठट्ठा करने वालों" एवं झूठे शिक्षकों की बात की गई है जो यह कह कर प्रभु के पुनरागमन का ठट्ठा उड़ाएंगे कि "पुराने समय से अब तक सब कुछ वैसा ही चल रहा है, यीशु मसीह वापस नहीं आएगा"। स्मरण रहे कि नूह के दिनों में भी ऐसा ही हुआ। बेशक, तत्कालीन लोगों ने नूह का यह कहकर बारम्बार ठट्ठा उड़ाया होगा कि तुम इतने अधिक वर्षों से प्रचार कर रहे हो और अब तक जल प्रलय नहीं आया। तुम्हारा सारा प्रचार बेकार है, यह सब बन्द करो।

"जब वे ऐसा कहते हैं तो यह भूल जाते हैं कि परमेश्वर के वचन द्वारा ही बहुत समय से आकाश विद्यमान है और पृथ्वी जल में से बनी और जल द्वारा ही अस्तित्व में है, और इसी से उस समय का संसार जलमग्न होकर नष्ट भी हो गया। परन्तु उसके वचन द्वारा वर्तमान आकाश और पृथ्वी भस्म किए जाने के लिए रखे गए हैं और ये अधर्मी लोगों के न्याय और विनाश के दिन तक ऐसे ही रखे जाएंगे" (दू0पत0 3:5–7)। पतरस कहता है कि परमेश्वर के वचन का इस प्रकार ठट्ठा उड़ाने वाले ऐसी बात करते हैं जैसे कि 'प्रभु परमेश्वर ने इस सृष्टि के लोगों पर कभी विश्वसनीय न्याय–दंड भेजा ही नहीं'। वे यह भूल जाते हैं कि इस पृथ्वी पर महा जलप्रलय भेजकर परमेश्वर अपने वायदे के अनुसार न्याय–दंड प्रकट कर चुका है। बहरहाल, अब अगला न्याय–दंड इस पृथ्वी एवं आकाश को (जलप्रलय द्वारा नहीं – उत्प0 9:12–15, बल्कि) अग्नि के द्वारा नष्ट करेगा।

"हे प्रियों, यह बात तुमसे छिपी न रहे कि प्रभु की दृष्टि में एक दिन हज़ार वर्ष के बराबर है, और हज़ार वर्ष एक दिन के बराबर। प्रभु अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करने में विलम्ब नहीं करता, जैसा कि कुछ लोग समझते हैं, परन्तु वह तुम्हारे प्रति धीरज रखता है। वह यह नहीं चाहता कि कोई नाश हो, परन्तु यह कि सब पश्चाताप करें" (दू0पत0 3:8–9)। नूह एक सौ बीस वर्ष तक जल प्रलय के बारे में प्रचार करता रहा। उस जमाने में लोगों की दृष्टि में उसका

यह प्रचार मूर्खतापूर्ण एवं असत्य लगा। जैसे–जैसे अंतिम समय निकट आएगा, वैसे–वैसे वर्तमान युग में भी लोगों का रवैया यही होगा : "यह प्रचार सैकड़ों सालों से हो रहा है कि प्रभु यीशु वापस आएगा। वह कहां है?" अक्सर हम ऐसे वायदे करते हैं जिन्हें पूरा नहीं कर पाते। कभी हम अपने वायदे को भूल जाते हैं, कभी लापरवाही करते हैं, कभी–कभी हम अपना विचार बदल देते हैं, या फिर हम ऐसा वायदा कर देते हैं जिसे पूरा करने में असमर्थ होते हैं। परन्तु यह सब परमेश्वर द्वारा किए गये वायदों पर लागू नहीं होता। उसने अब तक अपना अंतिम न्याय–दंड इसलिए कार्यान्वित नहीं किया क्योंकि वह असीम धैर्य रखता है (चिर सहिष्णु है)। वह यह नहीं चाहता कि कोई नाश हो, बल्कि वह तो सबके मनफिराव का इच्छुक है। जितना ही अधिक समय तक वह संसार के प्रति सहिष्णुता दर्शाता है, उतना ही अधिक लोगों को सुसमाचार सुनकर उस पर विश्वास (मन फिराव) करने का मौका मिलेगा। परमेश्वर की ओर से होने वाली देरी (प्रतीक्षा) की संत पतरस यही व्याख्या देता है।

मनुष्य की दृष्टि में पांच–दस वर्ष बहुत लम्बा समय प्रतीत होता है। इसके विपरीत, मनुष्य के आरम्भ से अन्त तक के सम्पूर्ण इतिहास काल को परमेश्वर एक ही समय तथा एक ही नजर में देख लेता है। अतएव परमेश्वर की दृष्टि में एक दिन एक हज़ार साल के समान है और एक हज़ार साल एक दिन के समान। इसीलिए वह ज्यादा लोगों को मनफिराव का अवसर दे रहा है।

"परन्तु प्रभु का दिन चोर के सदृश आएगा जिसमें आकाश बड़ी गर्जन के साथ लुप्त हो जाएगा और तत्व प्रचण्ड ताप से नष्ट हो जाएंगे और पृथ्वी तथा उस पर किए गए कार्य भस्म हो जाएंगे" (दू0पत0 3:10)। संत पतरस आगे यह कहता है कि अपने समय पर प्रभु यीशु अवश्य आएगा। उसका यह पुनरागमन 'रात के चोर' के आगमन के समान होगा। अर्थात् वह बिना कोई चेतावनी दिए ऐसे समय आ जाएगा जबकि किसी को उसके आगमन की कोई उम्मीद नहीं होगी। जैसे कि नूह के समय, एक सौ बीस साल तक ईश्वरीय न्याय–दंड के प्रचार के बाद, बिना किसी सूचना के एक दिन अचानक जल प्रलय शुरू हो गया। तब विश्वास नहीं करने वालों के लिए बहुत देर हो चुकी थी। प्रभु का समय आने पर, उसका पुनरागमन तथा इस दुनिया का न्याय बड़ी तीव्रता से पूरा होगा। तब उस पर विश्वास नहीं करने वालों के लिए बहुत देर हो चुकी होगी।

"जबकि ये सब वस्तुएं इस प्रकार नाश होने पर हैं तो तुम्हें पवित्र चाल–चलन और भक्ति में किस प्रकार के लोग होना चाहिए। तुम्हें परमेश्वर के दिन को शीघ्र लाने के लिए किस प्रकार प्रयत्नशील रहना चाहिए। उस दिन के कारण आकाश जलकर नष्ट हो जाएगा और तत्व प्रचण्ड ताप से पिघल जाएंगे" (दू0पत0 3:11–12)। चूंकि प्रभु का आना निकट है और वह बिना कोई पूर्व सूचना दिए अचानक आ जाएगा, तो हमारा जीवन कैसा होना चाहिए? प्रभु के आने के समय हमें कैसा होना चाहिए (इफि0 4:1)? यदि प्रभु के

पुनरागमन के समय हम शारीरिकता के चलाए जीवन व्यतीत करते हुए पाए गये, तो क्या हम प्रसन्न होंगे? अतः पतरस यह सिखाता है कि हमें अनन्तकालीन दृष्टिकोण से जीवन व्यतीत करते हुए, प्रभु के पुनरागमन के दिन की प्रतीक्षा करनी है।

"परन्तु उसकी प्रतिज्ञा के अनुसार हम एक नए आकाश और नई पृथ्वी की राह देख रहे हैं जिसमें धार्मिकता वास करती है। इसलिए प्रियों, जब तुम इन बातों की आस लगाए हो, प्रयत्न करो कि तुम प्रभु द्वारा शांति में निष्कलंक और निर्दोष पाए जाओ, और हमारे प्रभु के धीरज को उद्धार समझो, जैसा कि हमारे प्रिय भाई पौलुस ने अपने उस ज्ञान के अनुसार जो उसे दिया गया, तुम्हें लिखा। वह अपनी सब पत्रियों में इन बातों के विषय में ऐसे ही कहता है – जिन में कुछ बातों का समझना कठिन है। अज्ञानी और अस्थिर लोग इनके अर्थों का तोड़–मरोड़ करके, जैसा कि वे पवित्रशास्त्र की शेष बातों का भी करते हैं, अपने ही सर्वनाश का कारण बनते हैं" (दू0पत0 3:13–16)। अनन्तकालीन दृष्टि से जीवन व्यतीत करने वाले लोग इस दुनिया के बेहतर होने पर आस नहीं लगाते, बल्कि इसके विनाश के बाद एक नई पृथ्वी और नया आकाश बनाये जाने की आशा में जीवन व्यतीत करते हैं। बहुत से क्रिश्चियन इस दुनिया के सुधार के लिए ऐसी प्रार्थना करते हैं जैसे कि नई पृथ्वी और नये आकाश की उन्हें कोई आशा ही नहीं। यहां चौदहवें पद में पतरस यह कह रहा है कि नई पृथ्वी और नये आकाश की आशा रखने

वाले प्रभु की "शांति में निष्कलंक और निर्दोष" पाए जाने के आकांक्षी होते हैं। परमेश्वर का वचन अटल है। जो लोग उसके वचन पर विश्वास के साथ उसके वायदों के पूरा होने की आशा में जीवन व्यतीत करते हैं, उनके मन इस पतित एवं गड़बड़ी भरे संसार में भी शांत व सुस्थिर रहते हैं (यूह0 8:32)।

पतरस अपने पाठकों को यह बताना चाहता था कि परमेश्वर इस संसार के प्रति इसलिए असीम धीरज रखे है ताकि अधिकाधिक लोग सुसमाचार सुनने व विश्वास करने (अर्थात् उद्धार) का अवसर पाएं। बेशक, यह संसार विनाश की ओर अग्रसर है, तत्पश्चात् एक नई पृथ्वी और एक नये आकाश की रचना होगी, तथा परमेश्वर अब तक इस दुनिया के प्रति इसलिए धीरज धरे है कि बहुतों का उद्धार हो। इन सच्चाईयों को आत्मसात् करने वालों का जीवन बदल जाता है।

"इसलिए हे प्रियों, पहिले ही से यह सब जानते हुए सचेत रहो, कि कहीं अधर्मी मनुष्यों के भ्रम में पड़कर बहक न जाओ जिस से अपनी स्थिरता से विचलित हो जाओ। परन्तु हमारे उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह के अनुग्रह और ज्ञान में बढ़ते जाओ। उसकी महिमा अब भी हो और युगानुयुग होती रहे। आमीन" (दू0पत0 3:17—18)। अन्ततः इन सच्चाईयों को जानने—मानने वालों को, इनसे भटकने के प्रति आगाह किया गया है। इस पतित संसार में रहते हुए शारीरिकता के जाल में फंसना और परमेश्वर के वचन

की बहुमूल्य एवं महान प्रतिज्ञाओं से दृष्टि हटा लेना बड़ा आसान है (इफि० 4:17–18)। इसीलिए अपनी इस पत्री की अंतिम पंक्तियों में पतरस यह लिखता है : "हमारे उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह के अनुग्रह और ज्ञान में बढ़ते जाओ"। प्रत्येक विश्वासी के लिए इन शब्दों के महत्व को पतरस भली–भांति जानता था। जितना ही अधिक प्रभु के ज्ञान में तथा उसके द्वारा दिए गये अनुग्रह में हम बदले जाते हैं, उतना ही अधिक हमारा ध्यान–मन उसमें एवं उसके वचन की सत्यता में लवलीन होता जाता है। इस प्रकार हमारा मन प्रभु पर स्थिर होता जाता है और तब हम भ्रामक एवं झूठी शिक्षा के बहकावे में भटकते नहीं (यशा० 26:3)।

✞ ✞ ✞

इस श्रृंखला की पुस्तकों का निम्नलिखित क्रम में अध्ययन ज्यादा लाभप्रद होगा :

1. परमेश्वर–कृत उद्धार
2. प्रेरितों के कार्य
3. वह मुझमें और मैं उसमें
4. रोमियों
5. इफिसियों
6. पहला कुरिन्थियों
7. पहला तीमुथियुस
8. तीतुस
9. पहला और दूसरा थिस्सलुनीकियों
10. प्रकाशितवाक्य
11. गलातियों
12. कुलुस्सियों
13. दूसरा कुरिन्थियों
14. फिलिप्पियों
15. फिलेमोन
16. दूसरा तीमुथियुस
17. पहला और दूसरा पतरस
18. यूहन्ना की पत्रियां

इन पुस्तकों की और प्रतियां प्राप्त करने हेतु इन फोन नम्बरों से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं :